

अध्याय-13 प्रमाण विचार और प्रमेय प्रारम्भ

आम्नायः प्राह तत्त्वं हरिर्भिह परमं सर्वशक्तिं रसाब्धिम्
तद्भिन्नांशांश्च जीवान् प्रकृति कवलितान् तद्भिमुक्तांश्च भावाद्
भेदाभेद प्रकाशं सकलमपि हरेः साधनं शुद्धं शक्तिम्
साध्यं तत् प्रीतिर्मेवेत्युपदिशति जनान् गौरचन्द्र! स्वयं सः।

गुरु परम्परा द्वारा प्राप्त वेद-वाणियों को आम्नाय कहते हैं वेद और पुराणों को प्रमाण माना गया है। इन्हें शब्द प्रमाण कहते हैं इन प्रमाणोंसे सिद्ध है कि -

- 1) हरि ही परम तत्व हैं।
- 2) वे सर्वशक्तिमान हैं।
- 3) वे अखिल रसामृत-सिन्धु हैं।
- 4) मुक्त और बद्ध जीव उनके विभिन्नांश तत्व हैं।
- 5) बद्ध जीव माया के अधीन होते हैं।
- 6) मुक्त जीव माया से मुक्त होते हैं।
- 7) चित्-अचित् जगत श्रीहरि का भेदाभेद प्रकाश है।
- 8) शुद्ध भक्ति ही एकमात्र साधन है।
- 9) कृपण प्रीति ही साध्य वस्तु है।

महाप्रभु ने जीवों के लिये 10 प्रकार के तत्वों का उपदेश किया है। उसमें पहला प्रमाण तत्त्वा शेष 9 प्रमेय हैं। प्रमेयको 3 भागों में विभक्त किया गया-

प्रमेय (2-10)	{	सम्बन्ध तत्व (2-8 श्लोक)
		अभिधेय तत्व (9वां श्लोक) - साधन
		प्रयोजन तत्व (10वां श्लोक) - साध्य

शास्त्रों में 10 प्रकार के प्रमाण बताये हैं -

- ① प्रत्यक्ष ② अनुमान ③ आर्ष ④ उपमान ⑤ अर्वापत्ति ⑥ अभाव
⑦ सम्भव ⑧ ऐतिह्य ⑨ चेतना ⑩ शब्द

* इनमें से केवल शब्द प्रमाण ही मान्य हैं क्योंकि यह स्वयं आप्तान से प्रकट हैं।

प्रमेय -> प्रमाण के द्वारा जिस विषयको सिद्ध किया जाता है उसे प्रमेय कहते हैं। दशमस्कन्ध के 3-10 श्लोक प्रमेय के वर्णन में हैं।

दशगुल-1 → स्वतः सिद्धी वेदो हरिवयितवेद्यः प्रभृतिः

प्रमाणं सत् प्राप्तं प्रमिति विषयान् तान्नव विद्याम्
तथा प्रत्यक्षादि प्रमितिसहितं साध्यति नः
न युक्तिस्तर्कारख्या प्रविशति तथा शक्तिरहिता ।

ब्रह्मा आदि के द्वारा ^{गुरु} परम्परा क्रम से सम्प्रदाय में जो स्वतः सिद्ध वेद पाये जाते हैं उन्हें "आम्नाय वाक्य" कहते हैं। ये आम्नाय वाक्य 9 प्रमेय तत्वों को सिद्ध करते हैं। जिस युक्ति का तात्पर्य केवल तर्क है, वैसी युक्ति अचिन्त्य विषयों (भगवत् सम्बन्धी) में कार्य नहीं करती।

आम्नाय वाक्य → असत् सम्प्रदाय के आचार्यों ने जिन-जिन वेद-ग्रन्थों को प्रमाण माना है, वे सब आम्नाय हैं। उदा० → वेद, गीता, भगवत् आदि।

- 2) दशगुल तत्व श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षा होने के कारण भगवत्-वाणी है अतः यह भी आम्नाय हैं।
- 3) ॥ सात्विक उपनिषद् → ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, द्वान्दीय, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर उपनिषद्।
- 4) जैव धर्म, भक्तिरसामृत सिन्धु आदि वैष्णव आचार्यों के ग्रन्थ भी आम्नाय के अन्तर्गत हैं क्योंकि ये भगवान के नित्य परिकरों द्वारा प्रकाशित हैं।
- * प्रक्षिप्त अंश → समय-2 पर कुछ असत् व्यक्ति अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिये वेदों में अद्याय, मण्डल और मन्त्र जोड़ देते हैं इन बाद में जोड़े हुये अंशों को 'प्रक्षिप्त अंश' कहते हैं। इनको आम्नाय नहीं माना जा सकता।

Q1 Ans ब्रह्माने शिष्य परम्परा के द्वारा शिक्षा दी है, इसका वेद में कोई प्रमाण है? मुण्डकोपनिषद् में कहते हैं →

ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठां अथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्राह।

सम्पूर्ण ऋग्वेद के रचयिता तथा सबकी रक्षा करने वाले ब्रह्माजी समस्त देवताओं से पहले प्रकट हुये और अपने बड़े पुत्र अथर्वा को समस्त विद्याओं की आधारभूत ब्रह्मविद्या का भलीभाँति उपदेश किया।



श्रीमद्भागवत में भगवान् ने कहा है -

कालेन नवरा प्रलये वाणीयं वेदसंज्ञिता
मयादौ ब्रह्मणे प्रोक्ता धर्मो यस्यां मदात्मकः ।

वेद वाणी समयके फेर से लुप्त हो गई थी। फिर ब्रह्माके कल्पके आरम्भमें मैंने उसे ब्रह्माको उपदेश किया।

Ques

सम्प्रदाय बनाने की आवश्यकता क्यों हुई ?

Ans

संसारमें अधिकतर लोग मायावादका आश्रयकर भक्तिपथ से रहित कुपथ पर चलते हैं। यदि शुद्ध भक्तों का कोई अलग सम्प्रदाय न हो तो सत्संग मिलना दुर्लभ हो जायेगा, इसलिये पद्मपुराणमें कहा गया है -

सम्प्रदायविहीना ये मन्त्रस्ते विफला मताः

अतः कलौ भविष्यन्ति चत्वारः सम्प्रदायिनः ।

श्रीब्रह्माकृष्णसनका वैषणवाः शक्तिपावनाः

चत्वारस्ते कलौ भाव्या धुत्कले पुरुषमोन्तमातृ ।

रामानुजं श्रीः स्वीचक्रे मध्वाचार्यः चतुर्मुखः

श्रीविठ्ठलस्वामिनं रुद्रो निम्बादित्यं चतुःसन ।

इन सम्प्रदायोंमें वेद आदि ग्रन्थ प्राचीनकालसे जिस रूपमें हैं, उसमें कुछ परिवर्तन अथवा अंश प्रक्षिप्त होनेकी सम्भावना नहीं है। अतः इन ग्रन्थोंमें संदेहकी आवश्यकता नहीं है। साधु-सन्तों में सत् सम्प्रदायकी व्यवस्था प्राचीनकाल से चली आ रही है। इनमें से ब्रह्म-सम्प्रदाय सबसे प्राचीन है।

प्रस्थानत्रयी → किसी सम्प्रदायको प्रामाणिक तभी माना जाता है जब उस सम्प्रदाय की गीता, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्र के ऊपर टीका लिखी गई हो। इन तीनोंको प्रस्थानत्रयी कहते हैं।

Ques

चित् विषयमें युक्ति का प्रवेश नहीं है, इसका वेदमें क्या प्रमाण है ?

Ans

ब्रह्मसूत्र के अनुसार → "तर्कप्रतिषेधनात्" अर्थात् 'तर्क की प्रतिषेधा नहीं है।' तर्कक द्वारा कोई वस्तु स्थापित नहीं की जा सकती।

करता है, कल उससे अधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति उसका खंडन करके अपना तर्क स्थापित कर देता है। इसलिये हमारे आचार्यों ने 'शब्द' प्रमाण ही स्वीकार किया है। अन्य सब प्रमाण यदि स्वतः सिद्ध वेद-प्रमाण के अन्तर्गत हैं तो मान्य हैं अन्यथा परित्यज्य हैं। महाभारत में भी कहा गया है →

अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तकेण योजयेत्

प्रकृतिभ्यः परं घन्तु तदचिन्त्यस्य लक्षणम्। (भीष्म पर्व → 5/12)

प्रकृति से अतीत तत्त्व समूह अचिन्त्य होते हैं। तर्क प्राकृत विषयों में ही लागू होते हैं क्योंकि वह स्वतः प्रकृति के अन्तर्गत हैं। तर्क बुद्धि से उत्पन्न है और बुद्धि पाड़ है अतः तर्क कभी भी प्रकृति से अतीत तत्त्व को स्पर्श भी नहीं कर सकता। इसलिये अचिन्त्य विषयों में (श्रगवत-सम्बन्धी) शुद्ध तर्क व्यर्थ है।

दशमूल श्लोक - १ →

हरिस्त्वेकं तत्त्वं विधाञ्जितसुरेशप्रणमितः

यदेवेदं ब्रह्म प्रकृतिरहितं तत्त्वमुच्यते

परात्मा तस्यांशो जगदनुगतो विश्वजनकः

स वै राधाकान्तो नवजलदकान्तिश्चिदुदयः।

ब्रह्मा, शिव आदि देवता जिनको निरन्तर प्रणाम करते हैं, वे हरि ही स्वरूपा परमतत्त्व हैं। शक्तिरहित निर्विशेष ब्रह्म उन श्रीहरि की अंगकान्ति है। जगत्की स्रष्टाकर उसमें अपने एक अंश में प्रविष्ट रहने वाले अन्तर्यामी परम-पुरुष परमात्मा उन श्रीहरि के अंशमात्र हैं। वे श्रीहरि नव-जलधर-कान्ति से युक्त चित् स्वरूप श्रीश्रीराधावल्लभ हैं।

Ques 3 उपनिषदों में ब्रह्म को ही सर्वश्रेष्ठ तत्त्व बताया गया है। श्रीगौरहरि ने किस प्रमाण के आधार पर उस ब्रह्म को श्रीहरि की अंगज्योति बताया ?

Ans 1 विष्णु पुराण में कहा है →

रेश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः प्रियः

ज्ञान वैराग्यौश्चैव बभूवां शरा इतीदृशान्। (विष्णु पुराण → 6/5/74)

सम्पूर्ण रेश्वर्य, सम्पूर्ण वीर्य, सम्पूर्ण यश, सम्पूर्ण श्री (सौन्दर्य), सम्पूर्ण ज्ञान

और सम्पूर्ण वैराग्य - इन 6 अचिन्त्य गुणों से युक्त परमतत्त्व ही भगवान हैं। इन 6 गुणोंमें अज्ञ और अंगी का सम्बन्ध है।

अज्ञी → जिसमें अन्य अज्ञों का समावेश होता है। अज्ञी गुणमें शेष गुण समूह अज्ञ के रूप में रहते हैं। उदा० → वृक्ष अज्ञी है, उसकी डाल, पत्ते, फूल आदि अज्ञ हैं। इसी प्रकार शरीर अज्ञी है, हाथ व पैर उसके अज्ञ हैं।

- * इसी प्रकार भगवान के चिन्मय-विग्रह की श्री (रूप) अज्ञी है तथा ऐश्वर्य, वीर्य और यश - ये तीन गुण अज्ञ हैं।
- * ज्ञान और वैराग्य स्वयं गुण नहीं हैं ये गुण के गुण हैं। ये यश नागक गुण के गुण हैं। यही ज्ञान और वैराग्य निर्विभोष निराकार ब्रह्म का स्वरूप हैं।

ब्रह्म → निर्विकार, निष्क्रिय, अवयव रहित निर्विभोष ब्रह्म स्वतन्त्र सिद्ध तत्त्व न होकर भगवान के श्री विग्रह का आश्रित तत्त्व, उनकी अज्ञ कांति है। अर्थात् यह वस्तु नहीं वस्तु का गुण है। उदा० → अग्निका प्रकाश स्वतः सिद्ध तत्त्व नहीं बल्कि अग्निके अधीन एक गुण मात्र है।

- * ज्ञान और वैराग्य का कोई आकार नहीं होता अतः ब्रह्म भी निराकार है।

परमात्मा → गीता में भगवान कहते हैं →

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मैत्युदाहृतः
यो लोकत्रयमाविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वरः।

क्षर (जीव) और अक्षर (ब्रह्म) से श्रेष्ठ एक अन्य पुरुष है जिसे परमात्मा कहते हैं। जो तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर समस्त जगत् का पालन करते हैं।

भगवान का प्रत्येक अंश ही पूर्ण है इसलिये उपनिषद् में कहा है →

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते। (बृहदारण्यक उपनिषद् → 5/1)

अवतारी पुरुष पूर्ण हैं। उनसे निकलने वाले अवतार भी पूर्ण हैं। पूर्णसे पूर्ण ही आविर्भूत होता है। पूर्णसे पूर्ण निकाल लेने पर पूर्ण ही अवशेष रहता

हैं। परमेश्वर की पूर्णता में कोई कमी नहीं आती।

शाक्त तन्त्र के अनुसार- विष्णु के 3 रूप हैं-

वितणोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथो विदुः

एकं तु महतः सद्रूपं द्वितीयं त्वण्डसंस्थितम्

तृतीयं सर्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते।

- 1) कार्णोदशायी विष्णु → चित और मायिक जगत् के बीच में कारण समुद्र (विजा) है। इसी कारण समुद्र में कार्णोदशायी विष्णु शयन करते हैं तथा दूर स्थित माया के प्रति ईक्षण करते हैं और माया के द्वारा मायिक जगत् की रचना कराते हैं। वेदों में कहा है →

"स रक्षत" (सैतरीय उपनिषद् → 17/1) अर्थात् उस परमात्माने ईक्षण किया।

- 2) गर्भोदशायी विष्णु → कार्णोदशायी विष्णु (महाविष्णु) अपने एक अंश से प्रत्येक ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट हो जाते हैं। इनको गर्भोदशायी विष्णु कहते हैं। इनकी नाभि से कमल प्रकट होता है जिससे ब्रह्मा की उत्पत्ति होती है। इसी नाभिकमल में 14 लोकों की कल्पना की गई है।

- 3) क्षीरोदशायी विष्णु → गर्भोदशायी विष्णु अपने एक अंश से समस्त जीवों के हृदय में क्षीरोदशायी विष्णु के रूप में स्थित हैं। इनका आकार अंगूठे के बराबर है। इनको हिरण्यार्ध ईश्वर या परमात्मा भी कहते हैं। इनके लिये ही उपनिषद् में कहा गया है →

इह सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिवस्वजाते
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाहति अनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति।

एक डाल पर 2 पक्षी बैठे हैं (शरीर रूपी वृक्ष) जिसमें एक पक्षी सुख-दुख रूपी फल का आस्वादन कर रहा है और दूसरा उसको देख रहा है। यही परमात्मा कर्मफल दाता है और जीव कर्मफल भोक्ता है।

Q → श्रीहरि ही स्वयं कृष्ण हैं - इसका क्या प्रमाण है ?

Ans 1) भगवान् ऐश्वर्य और माधुर्य - 2 रूपों में नित्य प्रकाशित हैं। नारायण ऐश्वर्य प्रकाश है जो महाविविक्त के अंश और परव्योम - वैकुण्ठ के पति हैं। श्रीकृष्ण माधुर्य प्रकाश हैं, उनमें माधुर्य इतना अधिक है कि उसके आगे ऐश्वर्य ढका रहता है।

सिद्धान्ततस्त्वग्देऽपि त्रिंश - कृष्णस्वरूपयोः
रसेनोत्कृष्यते कृष्णरूपमेवा रसस्वितिः ।

सिद्धान्त रूप से कृष्ण और नारायण में कोई भेद नहीं है परन्तु रस दृष्टि से कृष्ण प्रेष्ठ हैं।

2) श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान् हैं इसका प्रमाण वेद, उपनिषद् और पुराण हैं।
अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा न्व परा न्व षविभिश्चरन्तम्
म सध्रीचीः । स विधुचीर्वसान आवरीवर्तिभुवनेष्वन्तः । (ऋग्वेद)

गोपवंश में उत्पन्न एक बालक को देखा, जिसका कभी भी पतन नहीं है। वह कभी अत्यन्त निकट और कभी दूर नाना पवों में विचरण करता है। कभी - 2 वह विभिन्न वस्त्रों से सुसज्जित रहता है तो कभी एक रंग के वस्त्रों से। इस प्रकार वह बारम्बार अपनी प्रकट और अप्रकट लीला को प्रकाशित करता है।

3) श्रीमद्भागवत में व्यासदेव ने - भगवान् के सारे अवतारों का वर्णन करने के पश्चात् कहा →

"एते चांशकला पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।"

राम, नृसिंह, वामन आदि अवतार समूह पुरुष (महाविविक्त) के अंश या कला हैं परन्तु कृष्ण स्वयं भगवान् (अवतारी) हैं।

4) गीता में भगवान् ने कहा है →

"मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चदस्ति धनञ्जय"

मुझसे प्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है।

Q → कृष्ण का आकार तो मनुष्य के समान है फिर वो सर्वव्यापी कैसे हो सकते हैं ?



Ans हमारी बुद्धि जड़ है और जड़ बुद्धि चिन्मय तत्व को स्पर्श नहीं कर सकती। यह बुद्धि कभी भी परमतत्त्व तक नहीं पहुँच सकती। नारद पंचरात्र में श्रीविग्रह के विषय में कहा है →

निर्दोषगुणविग्रह आत्मतन्त्रौ निश्चेतनात्मक शरीरगुणैश्च हीनः
आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादिः सर्वत्र च स्वगतभेदविवर्जितात्मा।

श्रीकृष्ण का विग्रह सच्चिदानन्दमय है। इसमें जड़िय गुणों का गन्ध तक नहीं है। जड़ जगत् में निराकार वस्तु (जैसे- आकाश) ही सर्वव्यापी हो सकती है परन्तु चित् जगत् में सभी वस्तुएँ, सभी धर्म असीम हैं। अकारयुक्त श्रीविग्रह भी सर्वव्यापी है। यही सर्वव्यापकता का गुण श्रीविग्रह का अलौकिक धर्म है। भगवान् के धाम की प्रत्येक वस्तु (जल, मिट्टी, वृक्ष, आकाश, सूर्य, चन्द्र आदि) चिन्मय है। वहाँ जड़ दोष नहीं है। हम लोग मायाबद्ध होने के कारण चिन्मय धाम का अनुभव नहीं कर सकते, परन्तु जब भक्तों की कृपासे भजन करते-२ हृदय में चित् भाव उदित होगा तब हमें चिन्मय ब्रज धाम के दर्शन होंगे। उदा०- सनातन गोरखामी की कृपासे अकबर को चिन्मय ब्रज धाम के दर्शन हुये।

Ques कृष्ण जब अपने चिन्मय धाम के साथ तथा परिकरों के साथ इस जगत् में आते हैं, तो संसारी लोग उस स्वप्रकाश विग्रह के सच्चिदानन्द दर्शन क्यों नहीं करते?

Ans भगवान् के अनन्त गुणों में 'भक्ततात्सल्य' गुण प्रधान है। इसी गुण से द्रवित होकर भगवान् अपने भक्तों को एक चिन्मय शक्ति प्रदान करते हैं जिससे कि उनके भक्त उनके भगवत्-स्वरूप तथा उनकी चिन्मय लीला का साक्षात् दर्शन करते हैं। अभक्तों के नेत्र और इन्द्रियाँ मायिक (जड़) हैं इसलिये वे भगवान् के दर्शन नहीं कर पाते। अभक्तजन उसे साधारण मानव चरित्र जैसा दर्शन करते हैं। गीता में भगवान् ने कहा है →

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः

मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्। (गीता-१०/२५)

किन्तु फिर भी भगवान् की कृपासे इन लोगों की सुकृति बनती है। वही सुकृति आगे चलकर कृष्ण के प्रति भ्रष्टा उत्पन्न कर देती है। अतः भगवान् के अवतार ग्रहण करने से समस्त जगत् का कल्याण होता है।



Q.1

Ans.1

ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, सूर्य, गणेश आदि देवताओं की वास्तविक स्थिति क्या है?

- 1) भगवान् कृष्ण में नारायण के 60 गुणों से 4 गुण अधिक - अर्थात् 64 गुण हैं। ये 4 गुण हैं - रूपमाधुरी, प्रेममाधुरी, लीलामाधुरी, वेणुमाधुरी। नारायण में 60 गुण पूर्ण मात्रा में पूर्ण चित् रूप में हैं।
- 2) 55 गुण देवताओं (ब्रह्मा, शिव) में पाये जाते हैं। इनमें जीवों के 50 गुणों के अतिरिक्त 5 अन्य गुण पाये जाते हैं जो कि आंशिक मात्रा में होते हैं।
- 3) जीवों में 50 गुण आंशिक रूप में पाये जाते हैं। सारे देवी-देवता भगवान् के आंशिक गुणों से युक्त हैं तथा संसार चलाने के लिये भगवान् ने इनको विशेष अधिकार प्रदान किये हैं। इसलिये देवता भी जीवों के लिये उपास्य स्वरूप हैं। इनकी कभी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। ये जीवों के गुरु स्वरूप हैं परन्तु इनको स्वतन्त्र भगवान् मानना अपराध है। पद्मपुराण में कहा है -

हरिरेव सदाशयः सर्वदेवेश्वरेश्वरः

इतरे ब्रह्मरुद्राद्या नावज्ञेया कदाचन।

प्रमेयके अन्तर्गत शक्ति विचार

दशमूल श्लोक - 3

पराख्यायाः शक्तेरपृथगापि स स्वे महिम्नि
स्थितो जीवाख्यां स्वामचिदधिहितं तां त्रिपदिकाम्
स्वतन्त्रेच्छः शक्तिं सकलविषये प्रेरणपरो
विकाराद्यैः शून्यः परम-पुरुषोऽयं विजयते ।

अपनी अचिन्त्य परा-शक्ति से अभिन्न होते हुये भी भगवान स्वतन्त्र इच्छामय हैं। वे चित् शक्ति, जीव शक्ति और माया शक्ति को समस्त विषयों में प्रेरणा प्रदान करते हैं। ऐसा करते हुये भी स्वयं निर्विकार रहकर अपने पूर्ण स्वरूप में नित्य विराजमान रहते हैं।

वेदों में कहा गया है -

न तस्य कार्यं करणञ्च विद्यते न तत्समश्चाव्यधिकश्च दृश्यते
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी सान्बलक्रिया च । (श्वे० - 6/8)

इन परब्रह्म की कोई क्रिया प्राकृत नहीं है क्योंकि उनकी इन्द्रियाँ अप्राकृत हैं। वे अप्राकृत शरीरसे एक ही समयमें सब जगह विराजमान रहते हैं। इनसे बड़ तो दूर, कोई उनके समान भी नहीं है। उनकी शक्ति कई प्रकारकी है जिनमें ज्ञान शक्ति, बल शक्ति और क्रिया शक्ति प्रमुख हैं। इनको सग्वित शक्ति, साध्विनी शक्ति और ह्लादिनी शक्ति भी कहते हैं।

वेदान्त सूत्र के अनुसार -> "शक्ति शक्तिमतोरभेदः" अर्थात् शक्ति और शक्तिमानमें कोई भेद नहीं है।

शक्ति के द्वारा ही कोई कार्य सम्पन्न होता है अतः किसी कार्य से उसकी शक्ति का परिचय प्राप्त होता है। परन्तु कार्य करने की इच्छा शक्तिमान की होती है। जगत् जगत् - मायाशक्ति, जीव जगत् - जीव शक्ति एवं चित जगत् - चित शक्ति का कार्य है। इन तीनों शक्तियों को भगवान अपने- 2 कार्यों में प्रवृत्त हमें की प्रेरणा प्रदान करते हैं, परन्तु स्वयं इन कार्यों में लिप्त नहीं होते, स्वयं निर्विकार रहते हैं।

Ques

स्वेच्छामय होना तो विकार है फिर भगवान निर्विकार कैसे हैं?

Ans

निर्विकारका तात्पर्य मायिक विकार से शून्य होना। माया - स्वरूप शक्ति की दाव है। माया का कार्य सत्य होने पर भी अनित्य है। अतः भगवानमें मायाका विकार नहीं है। उनमें इच्छा और विलास रूप जो विकार होता है, वह चिन्मय प्रे

विकास हो उसे जितना मान्य नहीं कर सकते। भगवानकी लीला आई
चित जगतके कायों का भाषा का कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु जिनकी
बुद्धि मार्गिक है वे चित जगतकी लीलाओं को मार्गिक ही समझते हैं।
उदा०, रश्मियाँ के रंगीनों सबकुछ पीला हो दिखाई देता है।

- * माया शक्ति चित शक्तिकी देखा है। अतः चित जगतमें जो विविधता है, वे
मायाके कायों में भी दिखाई देता है परन्तु मार्गिक जगतमें यह जल विस्तृत
स्वरूप में ही है अशुद्ध और सामान्य है। बाहरसे समान दिखान पर भी
वे रक्त दूसरे के विपरीत है। उदा०, आँखों में देखना पर मनुष्य और
आकाश प्रतिक्रिया समान दिखान पड़ता है परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से दोनों
विपरीत है। बाये ओर लाली और और दायाँ ओर लाली और लालाई
पाते हैं। मार्गिक विविधता चित जगत का विकृत प्रतिकल्पन है।

Ques 1) श्रीमती साधिका कृपाकी कैसी शक्ति है ?

Ans 1) कृपा पूर्ण शक्तिमान है अतः उनकी पूर्ण शक्ति है। उन्हें पूर्ण स्वरूप शक्ति जो चित
है। जैसा आदि और इसकी साधिका शक्ति अप्रत्यक्ष है। उसी प्रकार कृपा के
कृतल निराल लीलाद्वारा आन्तर्जगत् में प्रवृत्त होते दृष्टेही सदा अप्रत्यक्ष है।
स्वरूप शक्ति (श्रीमती साधिका) की किन्ना शक्ति है।

1) चित शक्ति (अन्तरङ्गा शक्ति)

2) जीव शक्ति (तरल शक्ति)

3) माया शक्ति (बहिरङ्गा शक्ति)

* स्वरूप शक्तिके सभी निराल गुण चित शक्ति में पूर्ण जाओ, जीव शक्ति
अवभावा में मायाशक्ति में विकृत रूप में प्रकाशित होते हैं।

स्वरूप शक्तिकी 3 वृत्ति हैं →

1) स्वादिनी (अमन्द) 2) सान्निध्य (सत्ता) 3) सन्निध (ज्ञान)

दशमूल-4 →

जो वे स्वादिनी प्रकाश प्रकाशिकृतेहोअनरत

स्तथा सम्विच्छक्ति प्रकटितरहो आवरसितः

तथा श्रीसन्धिन्या कृतविशद तद्दामनिचये

रसाभ्योदो मग्नो व्रजरसविलासी विजयते ।

स्वयं शक्ति की ३ वृत्तें हैं ह्लादिनी शक्ति, सखिनी शक्ति, माया शक्ति । ह्लादिनी क प्रलयविकार में कृपा भरी अनुरक्त रहने हैं। सखिनी शक्ति द्वारा प्रकाशित अन्तर्मुख भावों द्वारा व रासक सागत हैं। मायावी शक्ति द्वारा प्रकट वस्तुता आदि दृश्यों में स्वेच्छया वसना के मा

कृष्ण नित्य रससमुद्र में निमग्न रहते हैं।

८ चित्र शक्ति → (a) ह्लादिनी वृत्ति → स्वयं शक्तिको ह्लादिनी वृत्ति श्रीमती शक्ति के रूप में कृपा का पूर्ण चिन्मय आनन्द प्रदान करती है।

वे अपने कायव्यूह स्वरूप ४ प्रत्येक भावों की अत रासो और ४ प्रकार के अलङ्कारों की प्रिय-मयी नर्मरसो प्रलयारो पर प्रेम शक्ति के रूप में नित्य प्रकटित रहती है।

ये सब व्रजकी नित्य सिद्ध सखियों हैं।

(b) मायावी वृत्ति → चित्र शक्तिके मायावी वृत्ति द्वारा व्रज के प्राण वगैरे प्रपन्न आदि वस्तुता, सखी राजा मोक्ष आदि के चिन्मय शरीर

और जीवा विचार के साधन प्रकार के शक्तिया प्रकाशित होते हैं। चिन्मय भाव में प्रत्येक वस्तु की सत्ता मायावी वृत्ति के द्वारा प्रकाशित होती है।

(c) सखिनी वृत्ति → चित्र शक्तियों द्वारा समस्त प्रकार का भाव सखिनी शक्तिके रूप में प्रकटित होता है। कृपा शक्ति वृत्तिके द्वारा प्रलय

अनन्त ३ भावों में वृत्ति होकर भाव साक्षात् अनुभव करते हैं। लक्ष्मी लज्जका भावों को आकर्षित करना, गीतारण मरु आदि लीला व सखी कार्य सखिनी वृत्ति द्वारा किये जाते हैं।

९ जीव शक्ति → यह जीवा शक्ति की सत्ता है।

(a) ह्लादिनी वृत्ति → इसके द्वारा जीव की लक्ष्मी प्राप्त होता है।

(b) सखिनी वृत्ति → इसके द्वारा ब्रह्मज्ञान होता है।

(c) मायावी वृत्ति → इसके द्वारा मरु वस्तु जीव की सत्ता प्रकाशित होती है।

१० माया शक्ति → यह स्वयं शक्तिको माया है।

(a) ह्लादिनी वृत्ति → इसके द्वारा आनन्द भरा मयम आनन्द लक्ष्मी प्राप्त होता है।

(b) सखिनी वृत्ति → इसके द्वारा सांसारिक लक्ष्मी प्राप्त होता है।

(c) मायावी वृत्ति → इसके द्वारा लक्ष्मी मयम लक्ष्मी व ब्रह्मण्ड में प्रत्येक वस्तु की सत्ता प्रकाशित होती है।

Q.1 यदि शक्ति के समग्र कार्य चिन्तन है तो इसे चिन्तन क्यों कहा है ?

Ans. कृष्ण की शक्ति ऐसी प्रभावशाली होती है कि वह चित्त (मन) समग्र चिन्तन क्षमता का एक समग्र एक साथ प्रकाशित कर देती है।

इससे कृष्ण रूपवत् होते हुए भी निराकार है। सर्वव्यापक होत हुए भी सूक्ष्ममय हैं। भजन्मा होत हुए ही नन्दनन्दन हैं। सर्वसाध्य होत हुए ही गोपकुमार हैं। असीम और ससीम सब साथ ही निर्विकार नन्द हुए भी गोपगोप के मानस भगवत् हैं। यही कृष्ण की शक्तिका अचिन्तन है।

अपातिपाति जन्मो नष्टता पश्यतां च यः स भृशैरुक्तः

स वेदित वेदा न न तद्व्यापिनं किं तस्माद्दृष्ट्वा पुरुषं महाबलम् (श्लोक 13/19)

वे परमात्मा प्राकृत हाथों से रचित होकर भी अप्राकृत हाथों से त्रस्त रहता करते हैं। अप्राकृत पैदा हो सर्वत्र व्यापक करने हैं। प्राकृत नेत्र और कर्णों से ग्रहत होकर भी सब देखता और सूचना है। वे ही ही ज्ञान के तन्त्र हैं। उन सबको जानते हैं परन्तु स्वयं इन्द्र के लिये इन्हें कोउ नहीं जाना सकता। बह्मविद इनको आदि पुरुष और समस्त कोशों के कारण महत् पुरुष मानते हैं।

Q.1 भगवत् को इस समुद्र कहा है, वेदों में इसका कोई ज्ञान है ?

Ans. तान्त्रिकों के अनुसार,

"यद्वैतसुकृतम् । रसो वै सः ।"

जिसे सुकृत कहा गया है, वे परब्रह्म परमात्मा ही इस स्वरूप हैं।

Q.1 यदि वे इस स्वरूप हैं तो तान्त्रिकों को उन्हें क्यों नहीं देख पाते ?

Ans. मानव जीव की 5 शक्तियाँ होती हैं -

प्राक् स्थिति - इसमें जीव कृष्ण का विमुख होता है। वह केवल मायिक विषयों का चिन्तन और दर्शन करता है। अतः वह कृष्ण का

— औन्दर्य दर्शन नहीं कर सकता।

प्रत्यक् स्थिति - इसमें जीव मायासे विमुख एवं कृष्णोन्मुख होता है।

अतः वह कृष्ण के इस स्वरूप का दर्शन करने में समर्थ

— होता है।

Q.1 भागवत की किस उपायों से रखा जा सकता है ?

Ans. श्रीमद्भागवत में ब्रह्माजी ने भागवत की स्तुति करते हुए कहा है -

अवापि ते देव पद्मं कृत्वा यथापराधलोभाभ्युपहृतं रक्षां हि

जानाति तदा भगवन्माहुर्यो न चान्ये शक्योऽपि चिर विधिन्तम् । (भाग. 10/14/29)

जो व्यक्ति आपको चरित्रकर्मों की तनिक भी रूप प्रस्तुत करता है वही आपकी भाँसा की जान सकता है। दूसरा कोई ज्ञान तन्त्र आदि सिद्धान्तों द्वारा बहुत समय तक अभ्यास करने पर भी आपकी भाँसा की बर्बादी स्पष्ट नहीं जान सकता।

Q.2 सान्निध्य ब्रह्मात्मनः अवधारणों द्वारा क्यों कहे जाते हैं ?

Ans. सान्निध्य ही हिम शक्ति है। इस माया के उद्गार हैं सत् रज तम। भक्तों को अक्षय शक्तिका द्वारा ही 'मायाशक्ति' है। वह पृथक् रूप से कोई शक्ति नहीं है। माया ही जीवों के बन्धन और मोक्ष का कारण है। कृष्ण ने विमुख होने पर माया जीवों को 'समा' लक्षण में समाकर बन्धन करी है। कृष्ण के प्रात उद्भव होने पर वही माया ब्रह्मात्मनः का प्रतीक रूप बनें। कृष्ण सम्बन्धी ज्ञान प्रदान कर उस कृष्ण प्रेम का साक्षात्कारी बनाती है। साक्षात् गुणों से बनें ही जीव माया के भूत स्वरूप (स्वरूप शक्ति) की दृष्टि में अवस्था रहते हैं। अतः ही हीमा शक्तिका ही माया मान लेते हैं। वे माया द्वारा मोहित होकर कुसंस्कारों को बर्बाद कर लेते हैं।

Q.3 गोकुल उपासना में दुर्गात्मिका का जलना पापों का क्या है ? ये दुर्गा क्यों हैं ?

Ans. गोकुल की दुर्गा ही योगमाया है। उन्हें योगमाया का विकास जास भजा है। योगमाया भगवान की स्तुति शक्ति है। योगमाया भगवान का अमर जीवों को पूरे करती है। भगवान ने गीता में कहा है -

"नमो प्रकाश शक्तिर्योगमाया भगवत्"

अर्थात् योगमाया के द्वारा आवृत होने के कारण जब तक लिये प्रकाशित नहीं होता। भगवान और उनके पावकों पर योगमाया का प्रभाव नहीं होता, वह योगमाया का प्रभाव रहता है। जो माया का प्रभाव जो ब्रह्मात्मनः तक ही सीमित है। जो माया योगमाया शक्तिका सेविका है।

Q.4 वैष्णव नवोपवास की विशेषता क्या कहते हैं ?

Ans. ये नवोपवास जो श्रीवत्सलनराम के अमृत मूल हैं। नवोपमे मायापुर सर्वभूत हैं। ब्रह्म में जो स्थान गोकुल का है, नवोपमे वही मायापुर का है। मायापुर नवोपमे

का महायोगपीठ है। कलियुगमें नवहोणके जमान कोई नहीं है। चन्द्रायन चिन्मायता प्राप्त कर लेता है, वहीं वल रसाका अधिकारा है। बाह्य से नवहोण और वज्र दोनों प्रपञ्चमय दिखाई देते हैं।

नवहोण की परिधि 16 कोटि की है। इसका अकार आठकुलकमलके समान है। सीमन्तद्वीप मोक्षद्वीप मध्य द्वीप कीलद्वीप व्रतद्वीप जम्बुद्वीप गौरद्वीप रुद्रद्वीप ये आठ द्वीप आठ भूत हैं। इनके बीच में अन्तर्द्वीप के अन्तर्गत श्रीमन्नगपुर है। भगवान् परक मध्य भागमें महायोगपीठ रूप श्रीलङ्गान्नामामयका भक्त है। नगपुर में भजन करने से शीघ्र कृष्णार्णव की प्राप्ति होती है।

- * गोलोक, वृन्दावन और इन्द्रेण्य ये तीनों परब्रह्मणके अन्तर्गत हैं। गोलोकमें कृष्णकी स्वकाया लीला, वृन्दावनमें पारकीया, इन्द्रेण्यमें उषी लीलाका परिशिष्ट लीला होता है। इसमें वृन्दावन कोई अलग नहीं है। नवहोण वस्तुतः इन्द्रेण्य होकर भी वृन्दावनमें आश्रित है। वृन्दावनमें जो रूप अप्रकाशित है वहीं अप्रकाशित रूप नवहोण धाम में परिशिष्ट रूपमें प्रकाशित है।

Ques 1) गौरलीला क्या स्वरूप शक्त का कार्य है ?

Ans 1) श्रीकृष्ण और गौराङ्गदेव में कोई अंतर नहीं है। श्रीलक्ष्मीजीलामी के अनुसार, राधाकृष्ण प्रतीयवर्तुषे द्वापरादी शक्तिरमादेसात्मानाया भुवि ह्येव वदन्ते जतो दो चैतन्यारण्ये पकमधुना तन्नामैवैतन्मापू राधाशालभूतिवर्तित नोम कृष्ण स्वस्वम् ।

राधा कृष्णकी प्रणय विकृति रूप है। वह स्वभावदी शक्ति है। राधा आप कृष्ण से एक होत। दुवे जी तनया तनया निजता हेतु गोलोक वृन्दावनमें भगवत् 2 है। दारता कर विगमना है। कलियुगमें वे दोनों मिलकर एक स्वरूपमें चैतन्य नामसे प्रकट होते हैं। ऐसे राधा शाल रूप राधा अंकारात् भक्त कृष्ण स्वरूप गौराङ्ग देव को भी प्रणय करता है।

Ques 2) गौराङ्ग का भगवत् कर्म होता है ?

Ans 2) 1) अर्चना भागी में गौराङ्ग विष्णुप्रिया की पूजा होती है। जगत् विष्णु प्रिया को भू शक्ति भी कहते हैं। वे भक्त स्वस्वपी है। नवहोण जैसे नवधा भक्ति का स्वरूप है। उसी प्रकार विष्णुप्रिया भी नवधा भक्ति का स्वरूप है।

दशमूल श्लोक - 5 -

समस्तान् श्रद्धांनोक्तिं चिदन्तरो जीवनिचया
 हरेः सूर्यस्यैवापृष्णपि तु तद्देवविषयाः
 तन्नो ज्ञाया यस्य प्रकृतिपतिरेवेश्वर इह
 तज्जीवो नृत्तमोऽपि प्रकृतिकोऽपि तत्कृतः

जलती हुई प्रणिमी जहाँ अनेक दूर चित्तगोचरी होती है, किंतु उसी प्रकार चित्त
 सूर्य स्वरूप भावनात्मक परमाद्य स्वरूप अमृत जीव है जो हरि से अविनाश है
 हुओं ही ये जीव चित्त चिन्ता हैं। ईश्वर आप जीवमें 'मया' शब्द यह है कि ईश्वर
 मायाके सदीश्वर है ओ जीव मया अवस्था में ही मायात्मक, अदीन हो मोक्ष
 होता है।

वेदमें कहा गया है -

यथाग्नेः शुक्रा विस्फुलिङ्गा व्युच्छरन्ति
 रतमन्तरमन्तरम् सर्वाणि भूतानि व्युच्छरन्ति ।

जैसे अग्निको अनेक शुद्ध चित्तगोचरी होती है, वही प्रकार कृष्ण जो भावनात्मक जीव
 उत्पन्न हुये हैं।

Ques 1 'तत्स्वा' शब्द का अर्थ क्या है ?

Ans 1 जल और भूमिक क्षेत्रों में जल के तट कहा है यह जल और भूमिक क्षेत्रों में
 करने वाली रेखा निर्देश है। कभी तो जल हुआ करे कभी लव जाता है फिर
 कभी नदी का द्वारा तटों जाने पर भूमेखरे के साथ मिलकर भूमिक क्षेत्र
 बन जाता है।

जिस जगत्को जल और भूमिक क्षेत्रों में भूमि तट क्षेत्र पर जल की विभाजन करने
 वाली रेखा कहा है तट है। जलों के जलिया स्थान पर जल शक्ति की रेखा है
 जीव मध्य स्थान में स्थित है। एक एक अलग चित्त जगत् और भूमिक क्षेत्र में
 स्थित बताया जा रहा है। जल जल चित्त जगत्की चित्त रेखा है, जल वह चित्त
 शक्ति का तल पाकर जल जगत्में जाता जाता है और शून्य क्षेत्र आत्मा के रूप में
 भावनात्मक क्षेत्र बनता है। यह जीव मायात्मक प्रति दृष्टि करता है वह तट
 कृष्ण विभाजन होकर भावनात्मक में वेद जाता है।

इस उद्भवित तटस्थता का नाम है तटस्वा स्वभाव है। जीव कृष्ण के तटस्वा
 शक्ति का प्रकट हुये है अतः जीव का स्वाभाव ही तटस्वा है।

• जीव का सुदृढ़ स्वरूप तथा चित्त बल की कमी ही उनके मायाबद्ध होने का कारण है।

Ques 1) मायमो विभिन्न प्रकार के कोन से बन प्रचलित है ? माय वाद कितने रूपों में प्रचलित है ?
Ans C विवर्तवाद : अज्ञानवश एक तन्मय प्राणि दूसरी तन्मयता लुप्त होने का विवर्त कहते हैं। उदा० - रस्सी को सर्प मान लेना।

मायवादी कहते हैं कि ब्रह्मा ही माय प्रकृत होकर जीव बन गया। अतः जीव स्वरूपतः ब्रह्मा है। तब अज्ञान के कारण अपने को जीव समझ रहा है परन्तु वह जीव नहीं है।

"अतत्त्वतोऽन्यथाबुद्धिर्विवर्त इत्युदाहृतः"

विवर्तवाद का खण्डन - 1) रस्सी में सर्प की लुप्ति होना विवर्त है अर्थात् अज्ञान के कारण रस्सी को सर्प मान लिया जाता है। यहाँ पर इस बात से श्वार्थविकल्प तन्मयता का लोग होता है - एक रस्सी को दूसरा माने। अतः यहाँ पर तन्मय तन्मयता (दृश्यो ज्ञात माय) का प्रचलित हो उसी प्रकार जब ब्रह्म में जीव की बुद्धि हो रही है अर्थात् जीव माय का कोई रूप तन्मय है जिसका अस्तित्व है कि जीव माय का कोई तन्मय नहीं होता। तो ब्रह्मा ही जीव तब समझ सकते हैं।

2) रस्सी को तुल्य रूप में ही कौनका गई प्रकाश किये तन्मय (तुल्य लेखनी आदि) में कौन नहीं की गई। क्योंकि रस्सी का प्रकाश राख के समान है अर्थात् समान तन्मय में ही तुल्य की जाया है। उसी प्रकार जीवक गुण (चिन्मयता भी ब्रह्मा का माय ही है)।

अतः ब्रह्मा माय और जीव माय का कोई तन्मय नहीं है, ऐसा विचार गलत है।

वैवर्तव मत - 1) हम चिन्मय आत्मा होते हैं जो भी अप. जीव पतिता द रहे हैं यही विवर्त है। दृष्टान्त लुप्ति हो विवर्त है। जीव अज्ञान का भ्रम चिन्मय है परन्तु वह आत्मा की लक्ष शक्ति (इसी प्रकाश शक्ति, प्रजा आदि) मान रहा है यही विवर्त है।

(3) प्रतिविवर्तवाद - 1) जीव ब्रह्मा का प्रतिविवर्त है। पूर्ण चिन्मय प्रकार तब में प्रतिविवर्त होता है, उसी प्रकार तब ही माय में प्रतिविवर्त हुआ अतः जीव ब्रह्मा।
उदा० - रस्सी एक ही है। लो पाये में पाये भ्रम होय पर मस्ती में अलग 2 रस्सी दिखाई पड़ रहा है। दोर फूट जाने पर बुरी फिर से एक हो रह जायेगा।

सी प्रकार ब्रह्मा रक्त है, वह निर्विशेष निराकार है। ब्रह्मा ही माया में प्रतिबिम्ब होकर अनेक जीवों के रूप में दिखाई पड़ रहा है। जीवों के मारे पार फिर से रक्त ही ब्रह्म रह जायेगा।

प्रतिबिम्बता का खलना - प्रतिबिम्ब किन्तु आकाशयुक्त, सीमायुक्त, राखीम (बन्धु) बनता है। ब्रह्मा असीम (अविनाशक), अनन्तकार, है जब उसका प्रतिबिम्ब कैसे बना सकता है।

(१) प्रतिबिम्ब के लिये हेतुनु साध्य पूर्ण, जब जहाँ प्रतिबिम्बता दृश्य बाला, यदि जल नहीं है तो प्रतिबिम्ब कैसे बनेगा?

वैष्णवमत - रक्त ही पूर्ण के लाल में जहाँ जहाँ दिखाई पड़ रहा है वह है वह तब तक तब की प्रभाव कर रहा है। प्रत्येक जीव के हृदय में बिना पानी का अलगा है दिखाई देता है ही भूला काम रक्त है किन्तु तब ही पूर्ण रूप में पार ही अलगा है बाली में अलगा है दिखाई पड़ रहा है उसी प्रकार ब्रह्मा जी कहते हैं कि कृष्ण रक्त रूप में ही अलगा है जीवों के हृदय में प्रभाव।

स्वरूप में - वास करते हैं।

(२) परिदृष्टताता - परिदृष्टता प्रति का माया माया कहना। यह आकाश भद्रकाश। आकाशक कोई आकार नहीं है परन्तु दायाँ बगल पर आकाशक एक आकार बना जाता है (हो के प्रसार आकाश है)। जब दायाँ फूटना है तो फिर यहाँ पर आकाश (यहाँ का आकाश) समकाल में लीन हो जाता है। उसी प्रकार ब्रह्मा रक्त है जब वह ब्रह्म शरीर धारण कर लेता है तब ही रक्त शरीर होकर यहाँ रक्त रक्त आकार हो जाता है। शरीर नष्ट हो पार फिर से वह ब्रह्मा रक्त लीन होकर रक्त हो जाता है।

परिदृष्टताता का खलना - ब्रह्मा जब खलना तब ही माया का खलना के सम्भव है।

वैष्णवमत - गीता में आगवान ने कहा है -

“ममैवाग्रो जीव लोके जीवभूतः सनातनः”

भोगवत्ती पर आश्रित है। इसी प्रकार वस्तु भी भगवान्‌के विग्रह का चरित्र है। गीता में भगवान्‌ कहते हैं -

"ब्रह्मो हि प्रतिग्रहम्‌ अमरं च अत्ययं च"

अर्थात्‌ ब्रह्म का संचय में है। इसलिये ब्रह्म कोई वस्तु नहीं बल्कि वस्तु का गुणमात्र है। गुण कदा भी स्वतन्त्र नहीं होता, वह गुणों के अधीन होता है। उदा० - अग्नि एक स्वतन्त्र सिद्ध होता है अग्नि की वाहक शक्ति को स्पर्श कहेंगे उसके गुण है वह गैर गुण स्वतन्त्र नहीं है बल्कि अग्नि पर आश्रित है।

Ques भगवान्‌को शारीरिक निर्विशेष, निर्गुण निराकार कहा है इसका क्या अर्थ है?

Ans निर्गुण - जिसमें कोई गुण नहीं है समस्त गुण चिन्मात्र हैं।
निराकार - जिसका स्वरूप आकार है लेकिन आकार नहीं है (अन्तः, सूक्ष्म, अजरा, व्याधि, शय, वृद्धि आदि से रहित)

निर्विशेष - जिसमें चिन्मात्र विशेषता है। भगवान्‌ एक मात्र असीम और असीम है। आकाश के समान फैला हुआ है।

ब्रह्मसंहिता में ब्रह्मजी भगवान्‌को स्तुति करते हुये कहते हैं -

अङ्गुलि यस्या नक्तोऽङ्गुलवर्गस्य पश्यन्ति पानि कलायन्ति चिरं च।
आनन्दचिन्मात्रं दृष्ट्वा तत्त्वतस्तस्मै ह्येति नन्दमात्रं सुखं तमसा जगाम्‌।

जिनका प्रत्येक भाग अन्तः ब्रह्मों के कार्य कर सकता है। जिनका विशाल आनन्दमय, चिन्मात्र है सारा भौतिक का मैं देखन करता हूँ। (भगवान्‌ ने भगवान्‌ को देख कर कहते हैं - तब तो मैं दृष्ट कर लेता हूँ।)

Ques ब्रह्म कैसा है? (मायावाद का खण्डन)

Ans 1) 'सर्वं ज्ञानं सत्तत्त्वं ब्रह्म' - ब्रह्म ज्ञान स्वयम्‌ है अतः इसको कदा भी भगवान्‌ कहना नहीं है।

2) निर्विशेष, गुणविग्रह आत्मन्‌को निश्चिन्तनात्मक शरीरब्रह्मोत्तरार्धन
आनन्दमात्ररूपदमुखोदरादि - सर्वत्र च स्वयं को दत्तवर्जितात्मा।

ब्रह्मजी में ६ दोष होते हैं जो कि भूतलियों में नहीं होते फिर ब्रह्म में दास कहा जा सकता है।

Q. चित् ज्ञात नित्य है, जीव भी नित्य है फिर चित वस्तु की शक्ति अथवा प्राकृत्य के जे सम्बन्ध में जड़िय काल उद्धारो मे विवक्षित है , भूत वर्तमान अर आगत्य । चित् ज्ञात मे केवल वर्तमान काल होता है। चित् ज्ञात की प्रत्येक दृष्टि नित्य वर्तमान होती है। हम ज्ञात ज्ञात में जो भी वर्णन करते है उस पर वर्तमान काल का प्रभाव होता है। इसलिए अणुचित जीव और समस्त चित वस्तुओं के वर्तमान में हम गौणिक काल के प्रभाव को दूर नहीं कर सकते। चित वस्तु में जागिरा होती है अतः उनके सम्बन्ध में तर्क करना व्यर्थ है। वे केवल अनुभूति का विषय है। हृदय का अनुशीलन करते है हमको चित् ज्ञात भव स्वतः डीकत होगे और तब चित् ज्ञात की प्रतीति भी उन्ही माय में होगी। मन और वाणी दोनों ज्ञात होने के कारण चित वस्तु का अनुभव नहीं कर सकते।

यतो वाचो निर्वर्तन्ते अपाया जगता एह । तदेव ब्रह्म ।
अर्थात् वाणी जनक राजा चित् ज्ञात में अनमर्श होकर होता जाती है।

श्रीभागवत सन्दर्भ में बताया है →

एकमेव तत् परमात्म त्वादिना तत् पञ्चतन्त्रात् । अत एव स्वस्व तद्रूपेणैव जीव पदार्थ रूपेण चतुर्धा वातवहते । सुनिमित्तकतांशवदेव इव गच्छन् तद्व्यवर्तितशक्ति तन् प्रतिवृत्तिरूपेण दुर्लभात्कृत्स्न चित्पदार्थमेव ।

कृष्ण → सूर्यस्वरूप स्वप्रकाश तत्त्व

स्वरूप शक्ति → सूर्यमण्डल

जीव शास्त्र → तर्कमण्डल या निकलाने वाली शक्ति । स्वस्व शक्तिको अपने कार्य जीव । शक्ति में निश्चय देने वाले ईश्वर का

स्वरूप → साच्चिदानन्द विग्रह

जगत्पदार्थ → चित् ज्ञात जगत्, ज्ञात पदार्थ

आत्म्य → चित् ज्ञात चित् ज्ञात ज्ञात जीव

प्रधान → ज्ञात ज्ञात चित् ज्ञात ज्ञात

Q. अग्नि की सूर्य किसे कहा जाता है जब ज्ञात पदार्थ है। चित् ज्ञात की तुलना ज्ञात ज्ञात पदार्थों से क्यों की गई है?

Ans. चित् वस्तु के कुछ गुणों में ज्ञात वस्तुओं में समानता होने के कारण है ज्ञात उदाहरण चित् ज्ञात है अन्यथा ज्ञात चित् वस्तु हमने कभी नहीं है। उसको हम कैसे समझ सकते हैं ज्ञात वस्तुओं को हम देखते हैं अतः केवल वे ही हमारे इन्द्रियों द्वारा ग्रहण हैं। चित् वस्तु की रक्तमात्र

वस्तु है जो वस्तुओं का विकार हो। विकृत वस्तु का शुद्ध वस्तु के साथ अलग संबंध सादृश्य रहता है। उदा. - ओला जल का विकार है परन्तु शीतलता के गुणों में समानता है। इस सिद्धांत के आधार पर जड़िय उदाहरणों का अंगगीतन किया जा सकता है।

- * उदाहरण केवल प्रादिक गूणा का व्यक्त कर है सर्वद्वन्द्वक गूणा को नशा जोरो ,
दूध व्यक्त समान है - यह कहनेवा इधक राधा व्यक्त महासक गूणा के समान
हो सकती है पन्नु इधके अन्त गुण जलवा अन्त होत है।
- सी प्रकार सूर्य स्वपता-हित कन्तु है उस किशो का पर प्रकाश गुण है यही कि
नरनुरो समान प्रकाश करत है। सूर्य के गुण एवं जलवा गुणों का सम्बन्ध
कोई सम्बन्ध नहीं है।

Quest-3

but

'अचिन्त्य भेदाभेद' क्या है ?

जहाँ पढ़ाई में योग था अष्टोद तक भावा दिखाई नहीं देता परन्तु कलात्मक
सामान्य में देखा जाहि है कलात्मक भावा उनकी जीव भावना और जीव शक्ति
में उत्पन्न जीवों का एक भाव 'योग' अष्टोद' देता है। यह ओटाहाद मूल
जहाँ बुद्धि में योग के कला भावना' कहा जाता है।

Quay 7

1957

जीव का नित्य स्वरूप क्या है ?

जीवां अणु-यंत्रण, जगत्वा युक्त होकर ही जीविका एक नित्य स्वरूप है, यह नित्य स्वरूप और सूक्ष्म है। जिसे प्रकृत स्वयं शरीर में हावा, पानी और आदि अणु अपने स्वयं के रक्त के एक गुंथन रूप को प्रकाशित करते हैं। उसी प्रकार जीव शरीर में ही अणु-प्रयोगों से गठित एक गुंथन-रूप-कण स्वरूप प्रकाशित है। यहाँ स्वयं जीव का नित्य स्वरूप है। मायावद् भी वह यह नित्य स्वरूप सूक्ष्म शरीर में स्वयं शरीर द्वारा देक जाता है।

जीनामा जब यह स्कूल शरीर छोड़ता है तब वह सूक्ष्म शरीर (सिद्ध शरीर) मन, बुद्धि अहंकार चित्त तथा उरा शरीर की समस्त कर्म वस्तुनाओं को साथ लेकर दूसरे शरीर में प्रवेश करता है। यदि वह मन पर भी सिद्ध शरीर नहीं बनाता तब सिद्ध शरीर केवल मुक्त अवस्था में रहता होता है। पिछले जन्मों के साक्षरों के अनुसार ज्ञान शरीर, स्वभाव और तर्क प्राप्त होते हैं। फिर जीव वर्णाश्रमों में प्रवेशकर पुनर्जन्म करता है और यह चक्र चलता रहता है।

Ques यदि मन बुद्धि, अहंकार प्रकृत (जड़) तत्त्व हैं तो इनमें ज्ञान क्यों दिखाकरा है?

Ans जीवों में ज्ञानात्मक परा और अपरा शक्ति का वर्णन किया है।

अपरा शक्ति - (जड़ शक्ति, माया शक्ति, अपरा शक्ति) जो श्रेष्ठ नहीं है।

भूतनामाउन्मा तत्त्व ख मनो बुद्धिरेव च

अहंकार इतीति माया प्रकृतिरुच्यते।

आपरा शक्ति जो है ज्ञानात्मक श्रेष्ठ नहीं होता। इसमें मन बुद्धि अहंकार आदि ३ तत्त्व हैं। इनमें जो ज्ञान दिखाई देता है वह माया ज्ञान है।

मन - यह जड़ तत्वों का साक्षात्कार ज्ञान उत्पन्न करता है।

बुद्धि - जो ज्ञान जड़ ज्ञान के द्वारा ज्ञान शक्ति का विवेचन करता है।

अहंकार - ज्ञान शक्ति प्रकृति जो यह रूपका होता है उसे अहंकार कहते हैं।

वे तीनों घटक जीवों के जड़ सिद्ध शरीरों को प्रकाशित करते हैं जो बड़े जीवों के लिए शरीर का अहंकार प्रकट होकर जीवों के निरव्यवस्था अहंकारों को दूर करता है।

मुक्त अवस्थामें मन में निरव्यवस्था अहंकार प्रकाशित हो जाते हैं।

ज्ञान शक्ति सूक्ष्म होने के कारण कार्य नहीं कर सकती ज्ञानों रखने वाले आध्यात्मिक कार्य नहीं करती हैं।

रखने वाले शरीर द्वारा सूक्ष्म शरीर दूका रहता है अतः ज्ञान का ज्ञान रखने वाले आध्यात्मिक मन, पुरुष ज्ञान आकाश उपलब्ध होता है।

परा शक्ति - (जीव शक्ति) परा अपरा श्रेष्ठ शक्ति।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्

जीवभूतां महाबाहो ययैवं दार्यते जगत्।

पराशक्ति जीव है। यह त्वत्त्व कलात्मक होती है। अतः अल्पस्वरूप होने के कारण उरा दुर्बलता होती है। इस कारण वह माया शक्ति द्वारा बड़े होने के योग्य होता है।

- * * जीव एक चैतन तत्त्व है। उसमें चैतन्यताके 3 गुण इच्छा, क्रिया अनुभव होते हैं।
 चित्त-जीवात्मा सूक्ष्म शरीर के द्वारा आवृत रहता है अतः सूक्ष्म शरीर में ही जीवात्मा के गुण इच्छा, क्रिया, अनुभव दिखाई पड़ते हैं।
 उदा० - यदि एक दीपक का हम कपड़े से ढक दें, तो कपड़े में ही प्रकाश दिखाई पड़ता है परन्तु यह कपड़े का अपना प्रकाशन होकर दीपक का प्रकाश है। उसी प्रकार जीव सूक्ष्म शरीर द्वारा आवृत है अतः सूक्ष्म शरीर में ही जीवात्मा के चैतन्यता के गुण प्रकाशित होते हैं। परन्तु उसमें सूक्ष्म शरीर चैतन्यता का वास्तविक चैतनाभास कहलाता है।

Ques - 'माया' क्या है?

Ans - 'मीथे' अर्थात् झूठ, माया वह शक्ति है जो चित्त शक्ति और जीव शक्ति का जगत में कृष्ण का परिचाय प्रदान करती है। अतः 'माया' शब्द का अर्थ शक्ति ही नहीं स्वरूप शक्ति का ही ज्ञान होता है।

Ques - श्रीहरि कौन है?

Ans - जो हरण करने वाला है अर्थात् नाम, रूप, गुण, लीलात्मक द्वारा शक्तियों के चिन्तका हर लेता है और बिना गुणों के चिन्तका स्वरूप सम्भव नहीं है अतः श्री-निर्गुण नहीं हैं वह अप्राकृत गुणों से युक्त है।

* चित्त लीला युक्त युगल (राधाकृष्ण) ही श्रीहरि हैं।

ॐ - म - तितव्य (स्थिति) ऊ - शिव (प्रलय) न - ब्रह्मा (जीव)

जैसे जब शुद्ध चित पदार्थ है, तब ऊर्जा का प्रसारण हुंति क्यो होती है

दशमूख-6 →

स्वरूप तैर्हीनान् निजमुखपरान् कृष्णविमुखान्

हरेर्मिया दण्डवान् मुलानेगावाते कलमति

तवा स्वूपे लंङ्गेहि विद्वानां कलेभानिका

महत्कर्मजानेर्जयते पातवान् स्वर्गिणी

जीव उत्पन्न कृष्णका निज कर हो कृष्ण कर हो अर्थात् स्वस्व धर्म हो उस स्वरूप धर्मो रहित, निज शुद्ध पर कृष्ण विमुख जीवों को दण्ड प्रदान करने के लिए आश्रयार्थ लाभाश्रयित उन्हें सत्ता बना और तमायुज सभी जगत्परों बोधा देती हो कृष्ण तथा लङ्ग शरीर में जीविक स्वस्वता आदर्शोदत्तकर मन्त्रा कहें दुःखपूर्ण कर्मोद्वेगों से आकर स्वर्ग और नरक में क्रमशः राज्य प्राप्त करने का शोण करती हो।

3 प्रकार के जीव होते हैं :-

- 1) नैजाकर्म कृष्णका सेवक हैं। बनान प्रवृत्ति द्वारा जो वे कुलुहल में जायावती सेवक निजों में राक्षसीता और पक्षीय निजों पर जीव अन्तर्गत हैं वे स्वर्ग प्राप्त करने के लिये तैयार रहते हैं। उनका जो मायावी कोई समतन्त्र नहीं है, प्रेमा ही उनका जीवन है।
- 2) नाशोद्वेगों विषय द्वारा मायाक प्रति ईश्वर का अत्यन्त अल्प चेतना जीव भी अन्तर्गत हैं। ये जीव मायाक निकट रहते हैं और अत्यन्त अल्प (क्षुद्र) होने के कारण सभी निज जात करती मायाक जातका ओर केवल है। इन अन्तर्गत जीवों में जो जो मायाको शोण करना चाहते हैं वे निजों में अत्यन्त होकर माया द्वारा निज बड़ा हो पाते हैं। जो जीव राज्य तन्त्र (कृष्ण) की सेवा की इच्छा करते हैं वे चित शक्तिका बल पाकर चिह्न में चले जाते हैं।
- 3) अस्वातन्त्र्य में जीव बहुत दुर्बल होता है, इस समय उसे राज्य तन्त्र (कृष्ण) की कृपा से चित बल प्राप्त नहीं होता और वह मायाबद्ध होने के शोण होता है।

अस्वातन्त्र्य में कुछ जीव मायाक जात पर कुछ जीव चित जात में क्यो चले जाते हैं। कृष्ण जात स्वेच्छाया स्वतन्त्र है। उनका यह भला अर्थात् स्वतन्त्र तमना अल्प माया में ही होती है। इस स्वतन्त्रता का राम व्यवहार (कृष्णकी सेवा की इच्छा) करने में जीव कृष्णमुख होता है और वह चित शक्तिका बल पाकर चित जात में चला जाता है।

अस्वातन्त्र्य में कुछ जीव मायाक जात पर कुछ जीव चित जात में क्यो चले जाते हैं। यही कृष्ण विमुखता

जीवके हृदयमें मायाकी भोजनेकी इच्छा उत्पन्न करती है। मायाकी कृपा २४ है। अग्रे यह बृद्ध अहंकार सा माया है कि मैं जो विषयों का शोका हूँ सो ६ अनिवाण्या (तम, माह, महामोह, तमिष, भ्रान्तमित्र) जीवके शरीरस्वरूप को आच्छादित कर देते हैं।

* स्वतन्त्र तारणा का मत अथवा असत् वातहार है जीवक बड़े वा गुरुत्व लोका शक्तमात्र कारण है।

प्रश्न कृपाजी जीवको इतना दुर्बल क्यों बनाया कि वह मायाग में आ गया ?
अन्तर कृपाजी माया के साथ ३ लीलाया ही है। अलग ३ अंतरवासा में जिन्ना ३ लीलाये होनी देखा सोचकर भावानों जीवको नरस्वावन्वाओं लेकर परमात्मा महाशक्ति उगी तक उत्तम पर क जिने उपोगी बनाया है। मायाबद्ध जीवस्वरूप लोच्युत निजरमुचकर कृपा विगुरु होत है जीव इस सतत्वा में चित्ता आहाक जीव जिता है, कृपा अपने दाग ओर पासीदों के साथ आनर्भूत हाक, यह उदा जति प्राप्ति करने का उतना अद्वक्त सुयोग प्रदान करते हो जा जीव इस सुविधा की ग्रहण करने उदागत प्राप्त करनेका प्रयास करते हैं व कमश चिन्मय दाग तक पहुँचा जात हैं।

प्रश्न ईश्वरकी जीवके जिने दुर्बल जीव क्यों कहा जात है ?
अन्तर जीवोंने स्वतन्त्र तारणा का होना उनके मत आतान का विशेष कृपा है तथोक्त स्वतन्त्र तारणाके आभावमें लोच गड नरुक्त राजन अतान्त बृद्ध हो जाता स्वतन्त्र तारणाके करता ही जीवने जो जगतको प्रभुता पाई है। सुख और दुख ती मात मनकी जति है। हम जिने दुख मानत है उसमें आरात्म व्यक्ति उसको 'सुख' मानता है।
जिने प्रकार जीवने अतम नरक हवेरी में पीठे पर निर्गत होत है, उगी जका जीव भी 'माया शोका' और कृपा विगुरु रूपी मल से युक्त है। माया इस 'कोश (दुख)' रूपी हवेरी में पीठ पीकर ब्रुं करते हो अत तर्हि सुख में का कोश अन्तर्ग मुखभागे होता है। अत तर्हि प्रदान करना भी अभावकी जीव के प्रति करता है। भागवतने स्वा कहा है -

यस्याहम अनुग्रहणामि हरिष्ये तद्वनं वाने।
ततोऽहमं त्यजान्ते अग स्वत्पना दुख दुखितम् ।

गह जात एक कारागार है और इसको रक्षित भी माना हो मगर इस जात कारागार में कृता विमुख जीवों का बन्दक रहने देती है।
जैसा राजा प्रजा की शताधिक लिये कारागार बनाता है वैसा ही जगताने करुणा करके जड़ जात सभी कारागार की स्वाध्यायी में मर जायको इसका रक्षक बनाया।
जैसा चार को जेल में बन्दक २०५ देकर बुद्ध भिजा जाता है, उसी प्रकार जीवों की भी संसार कारागार में २०५ देकर बुद्ध भिजा जाता है।

Ques: जड़ जात यदि कारागार में ही बंदी बना है -

Ans: मायिक जल में ३ प्रकार का है - जलजन्तु, स्थोजन्तु और तमोजन्तु। परंपरों जीव इन तीन जलजन्तु से बंधा है। जलजन्तु जल की चोरी की शक्ति लाह को होना पर भी इनसे बेधन में ला जाता है। इसी कारण जलजन्तु है।

Ques: माया की जल में जल का जल को कैसे बंधा सकते हैं ?

Ans: मायिक जल चित् तम को जल में ला कर सकते परन्तु जल जल में आधेना करता है - ' मैं माया का भोक्ता हूँ ' उसी माया जीव का चित् स्वरूप जड़ अहंकार रूप लिङ्ग जल में आवृत हो जाता है। सूक्ष्म शरीर आधेना जीव के तैरने में माया की जल में जल, स्थ, तम गुण, पड़ जाती है। मायिक अहंकार युक्त उच्च लोकों में ला करके तल देवताओं के पैरों में आने का, राजनी जीवों देवता और मनुष्य के शत से मित्र के पैरों में चोरी की साध माया जीवों (जलजन्तु में मत्त) को जल में लाहें को रहती है।

Ques: माया यदि जीव के स्वरूप के केवल सूक्ष्म शरीर द्वारा आवृत करती है तो उच्च उद्देश्य पूरा नहीं होता ?

Ans: सूक्ष्म शरीर से कार्य नहीं होता। सूक्ष्म शरीर से जो कार्य किये जाते हैं, उनसे सूक्ष्म शरीर में वायनासे उत्पन्न होती हैं। पुनः उन वायनाओं का संग्रह करने के लिये स्थूल शरीर मिलता है।

Ques: माया के कारागार में बंधे जीव क्या २ कर्म करते हैं ?

Ans: बंधे जीव २ प्रकार के कर्म करते हैं -

4) भोग के लिये कर्म : जीव भोग वारणा की दृष्टि के लिये ही इस जन्म में आया। भोग के लिये ही वह फिर 2 प्रकार के कर्म करता है : पाप और पुण्य। जीव अपनी भोग वारणाओं द्वारा परिचाहित होकर आत्म निद्रा में धुन आइक तशीभूत होता है वह सामानिक भोग कर्म की आशा से कर्मभार में प्रवृत्त होता है। वह जीव पुण्यकर्म और कुछ पापकर्म करके इस जन्म से भोग करत हो वे स्वर्ग या नरक में जन्म के पश्चात् पुनः संसृति के में जन्म जते हैं। गीता में भगवान् ने कहा है :
 "ते तं शुक्लं स्वर्गात्मकम् विश्राम्य शरीरं पुन्ये कर्मणाक विशन्ति"

(3) माया द्वारा दिये गये अभावों को दूर करने के लिये कर्म : शूना, व्यस, तस्य, मकान आदि के अभावों को दूर करने के लिये जीव कर्म करता है। तब माया द्वारा दिये गये कर्मों का निश्चित क लिये वह कर्म करता है।

Ques: कर्म और फल का संबंध कैसे संबंधित है? गौतम कहते हैं ईश्वर नामक कोई जीव नहीं है, किन्तु जो कर्मों से एक तत्त्व उत्पन्न होता है वह उत्पन्न ही सागर कर्मों का फल प्रदान करता है?

Ans: वेदों में साष्ट स्वरूप ईश्वर का कर्मफल का बतला बताया है।
 हा गुपती राखला सखाया समान त्रय परिपालयते।
 त्रयानां पिपाल स्वाह्वानाह्वानात्त्रयमिवाकशीति। (श्वेता 4/6, अनेक 1/14/21)

सागर कर्मों पीपलक वक्ष पर 2 परती नेह न एक वक्षीत और द्वारा उसका सखा ईश्वर। वक्षीत करी पक्ष। सागर त्रय के फलों को चरत है और ईश्वर उन फलों का अभाव न कर जीवकी पक्षी को प्राखवादन करत हूँ देखने हो।

* कर्म एक जाड तरतु है क्योंकि इसका साधन वह जाड शरीर है यदि यह मान ले कि कर्म से उत्पन्न उत्पन्न होता है तो अपूर्ण ही जाड हुआ क्योंकि जाड तरतु से कभी भी विमय वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती। कोड ही फल प्रदान करने के लिये विमयता की आवश्यकता होती है न अपूर्ण जब स्वयं जाड है तो वह फल कैसे प्रदान कर सकता है?

गीता में भगवान् ने अर्जुन से कहा -

"मयैवेते निहता" इति भव निमित्तमात्रं शिव सव्यसाचिन्। (गीता 2/33)

अर्थात् ये समस्त जीव तो मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं तुम केवल निमित्तमात्र बनो। इससे स्पष्ट है कि भगवान् सभी के कर्मों के फल को पहले ही निर्धारित

कर देते हैं।

Ques: आपने कर्मको अनादि क्यों कहा?

Ans: कर्मों का मूल कर्मबन्धन है और कर्मबन्धन का मूल अविद्या है। 'मे' कृपा का दार है यह भूजना ही अविद्या है। यह अविद्या विरजाने तक तब पर (निरवस्थान) नहीं जीते प्रकट होकर कृपा सिद्ध होना वहीं पर उदय हुई अतः इसकी उत्पत्ति अविद्या, ब्रह्माण्ड के जन्म काल के अनन्तर हुई है। इसलिए जन्म काल में कर्मों का आरंभ नहीं पाया जाना अतः कर्मों को अनादि कहा है।

Ques: कर्म किस प्रकार अनादि नहीं है?

Ans: कर्मों का मूल वरणा और वारणा का मूल अविद्या है। शरीर का भी किरी स उपना हुआ (कर्म का भी कोई आदि है) अतः कर्म अनादि नहीं है।

Ques: माया और अविद्या में क्या अन्तर है?

Ans: माया कृपा की शक्ति है जो ब्रह्माण्ड रूपी वायु का निर्माण करती है तथा जीवों को रात, रोज, तम, शुभा द्वारा बँटाकर उन्हें दण्ड प्रदान कर भुद्ध करती है।

माया की ३ वृत्ति हैं :-

(i) प्रधान वृत्ति → (जाडनिष्ठ) → इसके द्वारा समस्त जन्म लक्षणों का निर्माण हुआ।
कर्म-वि

(ii) अविद्या वृत्ति → (जीवनिष्ठ) → जीवों को भुद्ध आश्रय (मे कृपा का दार है) को आवृत करके उनकी शुद्ध आश्रय की, पुरुष विरा

पुत्र आदि १ प्रकट करती है।

इसके अतिरिक्त माया के २ और विभाग हैं - तारा और अविद्या ये दोनों जीवमात्र हैं।

(1) अविद्या → इसके द्वारा जीव का नाना होता है। अविद्या जीव तब तक कृपा को भोगी है तब तक उसके अन्तः अविद्या वृत्ति को किया चलने रहती है। यह जीवों को शुद्ध आश्रय को आवृत कर देता है।

(ii) तारा वृत्ति → इसके द्वारा जीवों को भुक्त होते हैं। अपराधी जीव जब कृपा-सुख होता है तब उसके अन्तः तारा वृत्ति की क्रिया प्रारम्भ होती है। इसके फलस्वरूप जीव में शुद्ध चेतना (सत्-त्वा) की उत्पत्ति होती है। सत्-त्वा के फलस्वरूप ब्रह्म ज्ञान का उदय होता है और ब्रह्मज्ञान से माया-वृत्ति नष्ट हो जाती है।

Ques) माया जीवको कैसे वश प्रदान करती है ?

Ans) माया जीवको 3 गुणों में बाँधकर उसे प्रभाव करती है ।

सर्वभूत → यह सभी की जलीर के समान है, यह सबकुछ बाँधता है।

रजोगुण → यह लोभ की जलीर के समान है, यह सब पर कलस बाँधता है।

तमोगुण → यह लह की जलीर के समान है, यह काम, क्रोधा सह बाँध आँधरा बाँधता है।

गीता में कहा गया है -

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिः सम्भवाः

निबन्धनात् महाबाहो देवं देहमात्मनसु

अर्थात् सत्त्व, रज, तम गुणों के द्वारा प्रकृति जीवको इस जाल में बाँध देती है।

Ques) क्या वास्तव निर्गुण है ?

Ans) वास्तव निर्गुण नहीं है क्योंकि यह बाह्य से मिलती है और जो सबकुछ ही उत्पन्न करता है।

वास्तव का स्वभाव अक्षय्य है और तब तक तब तक प्रकृति वास्तविक या निर्गुण है।

अतः वास्तव अक्षय्य के तमो गुणों (सत्त्व, रज, तम) से परे होने के कारण वास्तव ही वास्तव है।

Ques) प्रलय की किंवा कैसी होती है ?

Ans) प्रलय तब समय प्रकृति के उग्रता जब सत्त्व, रज, तम, सामान हो जाते हैं तब प्रकृति (माया) निर्गुण हो जाती है। जब प्रलय की शक्ति की शक्ति होती है तो वह माया के प्रति ईश्वर

(ईश्वर पर) करते हैं। माया जो है वह प्रलय का ईश्वर निबन्धन है और इस प्रकार

के फलस्वरूप निर्गुण माया क्रियाशील हो जाती है। प्रकृति के विनाश होने पर प्रकृति के उग्रता में निर्गुण द्वारा प्रलय तब महत्त्व प्रकट हुआ।

1) गन्तव्य तब तब अवस्था और कर्मों के द्वारा विकारों प्रकट हुआ और उससे अवस्था उत्पन्न हुआ।

2) अहंकार में विकार होने पर यह प्रकार का हो गया वेकारेक (माया), वेकारेक (माया) और तामसिक। तामसिक अहंकार को शक्ति महाभूतों (वायु, अक्षय्य, आदि) पर, तामसिक अहंकार को शक्ति ईश्वरों पर और शक्ति अहंकार को शक्ति ईश्वरों के देवताओं पर कार्य करती है।

3) तामसिक अहंकार में विकार होने पर अहंकार प्रकट होते हैं आकाश का गुण 'शब्द' है।

आकाश में विकार होने पर वायु उत्पन्न हुई। वायु के अन्दर आकाश की ओर सब ने अपना रुक गुण 'स्पर्शी' है वायु में ही वह धातु, इन्द्रियों की आज्ञा शक्ति, मन की सहज शक्ति और शरीर में तब होता है।

- 5) वायु में विकार होने तेज की उत्पत्ति हुई। तेज में शब्द और स्पर्श के साथ अपना गुण रूप भी है।
- 6) तेज में विकार होने पर जल उत्पन्न हुआ। इसमें शब्द, स्पर्श रूप के साथ अपना गुण रस भी है।
- 7) जल में विकार होने पृथ्वी उत्पन्न हुई। इसमें शब्द, स्पर्श रूप, रस के साथ अपना गुण गंध भी है।

8) सार्वभौमिक अधिकार विकृत होने पर 10 इन्द्रिया उत्पन्न हुई -
 5 ज्ञानेन्द्रियाँ - वायु नहीं, आकाश, जल, तृतीया।
 5 क्रमेन्द्रियाँ - वाक् (मुख), पाणि (हाथ), पाद (पैर), पाशू (जन्तुचरण)।
 उपस्था (मलहार)।

9) सार्वभौमिक अधिकार विकृत होने पर मन वाक इन्द्रियों के उत्पन्न उत्पन्न हुए।
 मन - चन्द्रमा, कान - शिखा, त्वचा - फल, नाभ - सूर्य
 जित्वा - तन्त्रा, नासिका - आह्वानकर्त्ता
 वाक् - शक्ति, पाणि - शब्द, पाद - उपाय, पाशू - मित्र, सार्वभौमिक - प्रजापति

24 नायक तत्व है - 10 इन्द्रियों, 5 महाभूत, 5 तन्मात्रा, मन बुद्धि, अधिकार, चित्त।

* 24 तत्वों से बने शरीर में अतुल्य चेतना और परमात्मा शक्ति तब है।

Ques हमारे शरीर में स्कूल एवं गृहम शरीरों का कितना भाग है? जीवात्मा कहां बसा करता है?

Ans स्कूल शरीर -> 5 महाभूत, 5 तन्मात्रा, 5 ज्ञानेन्द्रियों, 5 क्रमेन्द्रियों। यह जो है सूक्ष्म शरीर -> मन, बुद्धि, अधिकार, चित्त। यह चेतनाशाली है। जीवात्मा -> यह चेतन है। यह अपने सूक्ष्म, लक्ष्य दश काल और 12 भागों

समाप्त हो आत्म सूक्ष्म होम पर भी सारे शरीर में उल्लास जन्म व्याप्त रहती हो।

वेदमन्त्रों ने जीवधर्मा के तिसरे को कहा है -

आत्मलोकाश्चरानन्दनतम् (ब्रह्मसूत्र → ३.३/३३) । जगत् प्रकाश मरुत पर चन्दन लगे मे से सारे शरीर में उल्लास शीतलता का अनुभव होता है उसी प्रकार

सब सूक्ष्म जीवात्मा भी सारे शरीर में व्याप्त रहता हो।

गीता में भगवान् ने कहा है -

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।

इति श्रेष्ठी तथा कृत्स्न प्रकाशयति भारतम्। (गीता → १३/३३)

जगत् प्रकाश एक सूर्य सारे विश्व को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार एक जीवात्मा सारे शरीर को प्रकाशित करता हो।

आदि तत्त्व →

① महत् तत्त्व

↓
द्वे तत्त्वम्

② सार्वभौम ईश्वरत्व

③ राजाधोक सहेकार

④ तामसक सहकार

↓
माओर इन्द्रियों के देवता

↓
इन्द्रादि

(चतु, कर्मा, नाशक, जिह्वा, तर्का)

↓
इन्द्रादि

(चतु, कर्मा, नाशक, जिह्वा, तर्का)

↓
इन्द्रादि

(चतु, कर्मा, नाशक, जिह्वा, तर्का)

↓
इन्द्रादि

(चतु, कर्मा, नाशक, जिह्वा, तर्का)

(तेज, जल, भूमि)

(स्पर्श, गन्ध)

⑤ अविद्या । स्व से लेकर 6 तक आदि नारात्म्य की गई अतः इसे 'मायिक' आदि कहते हैं। परा से लेकर 10 तक आदि ब्रह्मजी की गई अतः इसे 'वैराज्य आदि' कहते हैं।

⑥ अकारण → इसमें पवित्र गन्ध, तृष्ण आदि की आदि हुई।

⑦ विचित्र → इसमें पक्ष, पक्षी, कर्कट आदि की आदि हुई।

⑧ मनुष्य →

⑨ देवता

Ques यदि जीव कर्मका और सुख-दुख का भोक्ता है तो ईश्वर का कर्मसे क्या संबंध है ?

Ans भगवान् प्रयोजक कर्ता और जीव प्रयोज्य (हेतु) कर्ता है।

उदा० - एक मालिकने नोकर का बाजारसे फल लाने की आज्ञा दी। नोकर बाजार में फल ले आया। यहाँ पर नोकरने जो कार्य किया वह अपनी इच्छा नहीं बल्कि मालिकको इच्छानुसार किया। अतः मालिक प्रयोजक कर्ता और नोकर प्रयोज्य कर्ता है।

इसी प्रकार जीव इस जगत्में अपने पूर्व जन्मों के कर्मों का भोग करता है तथा स्वयं ही साधन अर्थात् जन्मों के लिये नये कर्म भी करता है। इस अपने पूर्व जन्मों के कर्मों के फल भोगने एवं नये कर्म करने में भगवान् प्रयोजक कर्ता है और जीव प्रयोज्य कर्ता है। ईश्वर फलदाता एवं जीव फलभोक्ता है। भगवान् भगवान् ने कहा है।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशस्थः प्रियर्थात्

आभासश्च भूतानि जगद्विधायां मायया । (गीता १४/६)

अर्थात् भगवान् सबके हृदय में स्थित है और प्रत्येक जीवको य-म-क-ट की गति अर्थात् कर्मों के फल भोग करा रहे है।

— भविष्यपुराण के अनुसार →

पूजयापादिक विष्णुः करमेव पूर्वकर्मणा

अनादित्वात् कर्मोपशान्तिं विनाशयति कर्मणा ।

जीवका स्वतन्त्र इच्छासे किये गये पुण्य और पाप आदिक कर्मों विष्णु स्वतन्त्रता से नहीं है। भगवान् प्रयोजक कर्ता और जीव प्रयोज्य कर्ता है।

न कर्मोत्तमं पूजामन्वर्षि पापं न तत्र सा दीपजालोद्दितापि

इहो यमः पूजया दोषोऽस्ति मत्ते स्वयं योगेन्द्रादिव प्रजानाम् । (नारदोद्देशः)

भगवान्में विषमता और दृष्टान्तों को दूर करने के लिये स्वयं ही प्रयत्न करता है। भगवान् जीवों के पूर्व कर्मों के अनुसार ही इनको पुण्य पापादिक कराते है।

Ques भगवान् जीवको कितनी अवस्था में चैतन किन्ने प्रकारक है ?

Ans चैतन 5 प्रकारके हैं →

- (1) आह्लादित^{चैतन} - जो जीव कृष्ण वात्सल्य से भूषण कर जीव भूषण अधिपतिवत् है वह जीवक चैतनको चैतन अवस्था है। इसका चैतन चैतन प्रायः लुप्त ही रहता है। उदा० - वृद्ध, लज्जित, गर्वित आदि। किसी विषय से अपराध के

होने से पतवार, वृक्ष आदि वन्य जी आच्छादित चेतन हो उठते हैं अद्वितीय, समन्वित, समन्वित।

(३) साकुचित चेतन → साकुचित चेतन की चेतनता कुछ मात्रा में दिखाई पड़ती है। उदा० - पशु पक्षी सर्प, मछली जलजन्तु, कीट पतङ्ग आदि। आहार, निद्रा, भय, मैथुन इत्यादि कार्य कहा भी जाना-जाना अपने आकाशवाक्य जिते दूसरों से झगडा उठते-कुत्ते, बन्दर अपने शत्रु से दूसरों को नहीं आने देते, अन्धारा देखकर क्रीड़ा में सब गुण इनमें दिखाई देते हैं। इन जीवों में ईश्वर विद्यावाक्य प्रवाह नहीं होता इनकी चेतन दार्ढ्य साकुचित होता है।

* शन महाराज (सूक्त गीता) श्रुत महाराज (विष्णु गीता) इन्द्रधनु महाराज (हवी गीता) की पशु जीवों में भी भावना का स्वरूप था परन्तु यह साधारण निजम नहीं है।

(३)। सुकुचित चेतन → मनुष्य का जन्म जन्म पर भी ना ईश्वर का निश्चय नहीं करते और जो लोग नीति शायद नहीं मानते। ये ३ प्रकार के हैं।

(1) नीति चाहत → जो नीति शायद को नहीं मानते।

(2) नीति निराश्रय → जो नीति शायद मानते हैं परन्तु ईश्वर को नहीं मानते।

(4) अतर्कित चेतन → जिन्होंने गुरु पदाग्रह कर गलत शुरु कर दिया है। बाबल शक्ति की श्रेणी में हैं।

(5) पृथ्वीविक चेतन → इनको अपने स्वभाव का ज्ञान ही युक्त है तथा समन्वित ज्ञान ही प्राप्त है। शायद शक्ति एवं प्रेम शक्ति इस श्रेणी में आते हैं।

दशमोऽंश श्लोक - ७

यदा आगं आम हरिसगलक्षेणवत्जनं

कदाचित् सपञ्चल तदनुगम्ये स्याद् सन्निधुत

तदा कृष्णवृत्त्यान्यजति शनकैर्मथिकदरां

स्वरूपं विभ्राणो विमलरसघोषं स कुरुते।

साधारणों केवल जीवन जीने से भी आगल करते हुये जब हरि रस में गलत वेष्टावका दर्शन प्राप्त होता है, तब मायावत्त जीवनको वेष्टाव मार्गिक प्राप्त रस आगल होता है। कृष्ण नामिका उच्चारण करते २ और २ उनकी मायाक दशा दूर हो जाती है। जीत कमला स्व स्वका प प्र करता हुआ पनला कृष्ण जीत रस आगलाने को योग्य होता है।

॥ उपनिषदमे कहा गया है - ॥

समाने वृषे पुरुषो निमज्जो

शेषाने मुहमान

मुक्त यदा पश्यति - अन्यतोऽहम्भूतं महिमानमेति वेत्रहीनः । (मुक्त १/१/१)

एक वृष पर स्थित जीत माया द्वारा मोहित होकर शीकराश्रय है जब वह जीतनीय तरु पश्येत्तदा का दर्शन कर जीत है तब शीकरहित होकर अपनी कृष्णवृत्त रूप महिमाको प्राप्त कर लेता है।

Ques - 'मुक्ति' क्या है ?

Ans - मायाके बन्धन से दूखला पाप का जग है नास्त है फिर जब मायाक बन्धन से दूरकरा गिलाता है शरीर जग मुक्ति का साथ समाप्त हो जाता है अतः मुक्ति एक क्षणिक क्रिया है।

वेदान्त मुक्ति - "मुक्तिरहितान्तावा रूप स्वस्वीन व्यतिथिति"

अन्वया रूप का परिग्रहणकर अपने स्वरूप में स्थित होना ही मुक्ति है।

मायावादी मुक्ति - "आत्मान्तिक दुखान्त्राति एति मुक्ति"

आत्मान्तिक दुख निवृत्तिका मुक्ति कहते हैं।

* मुक्ति एक क्षणिक क्रिया है अतः मुक्ति होनेके बाद चित् स्वस्वकी प्राप्ति एक अन्य अवस्था है। उदा - एक व्यक्ति जेल में मुक्त हुआ परन्तु बाहर निकलने पर उसके परिवारका काह व्यक्ति उससे मिलने नहीं आया। यही पर प्राप्ति

दूसरा व्यक्ति जेलरो मुक्त हुआ और अपने परिवारमें चला गया। यहां दुख निवृत्तक
माना २ उसकी सख्तकी प्राप्त भी हो गई।

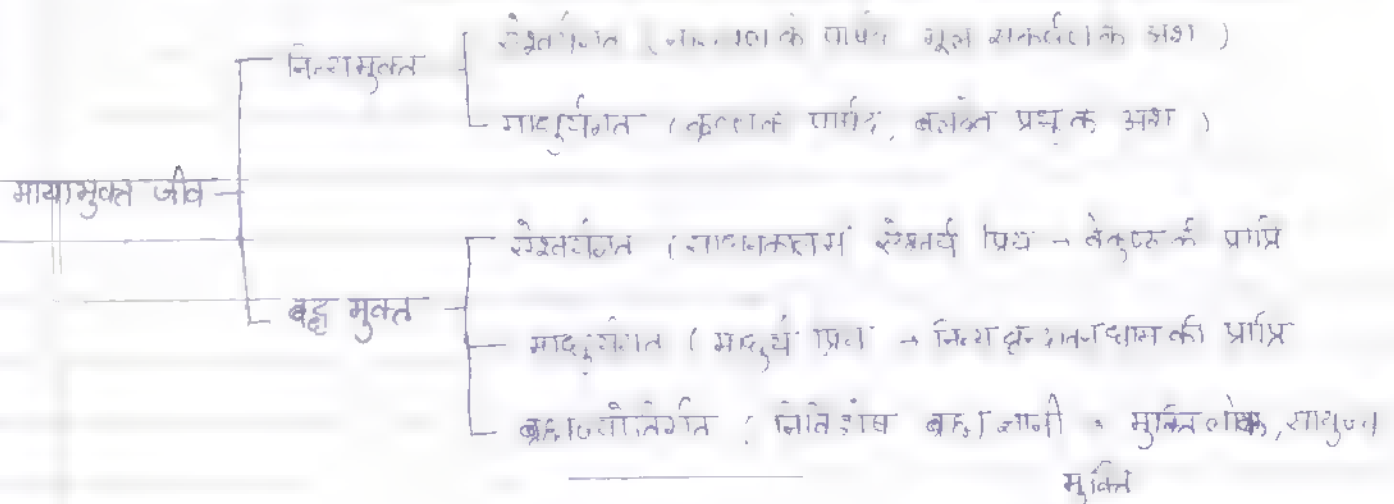
Answer भूमिति 2 प्रकार की है , वस्तुमान भूमित्व और स्वस्थानिक भूमिति ।

परन्तु तत्कालीन मुक्त आत्म-शाक्ति की परिपक्व अवस्था में होती है। आत्म-शाक्ति की पारमिता अवस्था में भी गणनाक उद्यान रहती है। आत्म-शाक्ति में दृढ रूप से स्थित होने पर नीति का जड़ रहने मुद्यान शरीर नष्ट हो जाता है तथा वह स्थित शरीर प्राप्त कर लेता है। इसी अवस्था में इसकी तत्कालीन मुक्त होती है।

6. अवस्थागत मुद्रा → इस अवस्था को प्राथमिक अवस्था तक लेना असाध्य है।

* * जीत निरुप कृपा दया हैं । इसे भुजनेक कला है । जीत भाग्यवृद्ध हुआ है । यह कृपाक चरणों में मूल अपराध है । जिनके चरणों में स्मरण का है । उन्हीं की कृपा से हमें आ अपराधों मुक्त मिल सकते हैं । अब कृपाक कृपाक विद्या हमें कभी भी भाग्य मुक्ति नहीं मिल सकती । जो जीत ज्ञान कम पाँच भागों में मुक्ति चाहते हैं । उक्ति ।

— अम व्यर्थ है ।



Quest 1

Ans 3

- 3) पाप शून्य (अविद्या शून्य) - (1) ज्ञानरहित (निराज्ञान) (2) मृत्युरहित
4) शीतलित (5) भोगवश्या रहित - (1) अपणय (भगवान् की सेवाक आर्तक
अन्य कामना रहित) (2) अत्यक्त (कृष्ण की सेवाक अपूर्ण कामना)
(9) अत्यसकम्प (जो कामना करने है वह शून्य होता है)

Quart

Ans.

नं० ॥ मन्त्रेऽन्तान्दुक्तकनार्थं च स्पर्शगन्तान्तर्यामिणी चार्थः
गर्ह्यसां पादरुजोद्धिषेक निर्दिष्टराश्या न प्रतीयते मात्रम् । (भा० १/५, २०)

जब तक जीवा अकिंचन, अभावप्रेमी, गन्धमा शान्तिप्रसक्त, चला दूति में नाना
 भी कर लेता तब तक समस्त सन्तों का नाश करने वाले शत्रु वारणों अकी-
 मति नहीं लगती।

* जल कभी पूर्व सृष्टिके प्रधानों जैविकों साक्षर राग मित्रता है उन्ही समग्रता कृतार्थ के चरणोंमें उसकी मति लग जाती है। —

सृष्टि : सु... सु... करि... कम... शायो मे सृष्टिकर्मी को सृष्टि कहा हो
 यह सृष्टि २ प्रकारकी होगी है - भवेत्त प्रत्येक एवं अनादिरुपता कार्यक ।

(1) शक्ति पद सूक्ति - \rightarrow जाने या अनजान में शुद्ध शक्ति के 64 रूपों में से किसी भी रूप का चिन्तन होना पर शक्ति पद सूक्ति बनती है।
 सत्ताद्वयी उपपत्ति, भावान्तर्गत तीनों स्थानों दर्शन, साक्षर साक्षमा, हारस्वरा प्रवृत्ति आदि।
 यह 2 प्रकार की होती है \rightarrow

बात सुकृति → जब भक्ति अंगों का पावन उनकी महिमा का लाभ कर लिया जाता है, उसे बात सुकृति कहते हैं।

ii) अग्राम सृष्टि - अग्नि की माहमा को न जानते हये अन्त्योम जल आके आगे

और वैष्णव साधु के अनुगमन में प्रवृत्त होता है। अब वह जिसे साधु कहते हैं वही श्रीगुरु है। यह द्वितीय साधुसंग है।

* प्रथम साधुसंग का फल गुरु पदार्थ और द्वितीय साधुसंग का फल भजन परिपाटी की शिक्षा प्राप्त करना है।

Ques 1 क्या अनर्षा रहित व्यक्ति को 'गुरु' पुरुष कह सकते हैं ?

Ans 1 अनर्षा युक्त पुरुष ही शूद्र शक्त है। शेर शक्त उत्तम दुर्लभ है। शूद्र शक्त ही वैष्णव है चाहे वह गुरुस्व हो या चोरी बहाल हो या चोरगल।

गुरुत्व { शक्ति प्रवर्तक (शालोक 64 अंग का गुरु) } शक्ति युक्ति (अनर्षा में ही)
 { अन्तर फल प्रवर्तक (विषय में प्रवर्तक कार्य साधना, भजन आदि) }

Ques 1 गौरकिशोर के शक्तियों का वर्णन क्या है ?

Ans 1 कृष्ण और गौर दोनों सदा सदा के साथ हैं।

साधुसंग { मधुर प्रदान अंगीर (कृष्णपीठ) - कृष्ण स्वरूप विराजमान
 औदार्य प्रदान मधुर्य (गुरुपीठ) - गौर स्वरूप विराजमान }

* जो साधनकाल में केवल गुरु साधन है वह सिद्धिकाल में केवल गुरुपीठ में सेवा करते हैं।

- 1) जो साधनकाल में केवल कृष्ण उपासक है, वह सिद्धिकाल में केवल कृष्णपीठ में सेवा करते हैं।
- 2) जो साधनकाल में कृष्ण और गुरु दोनों उपासक है, सिद्धिकाल में वह गुरु शरीर धारण कर दोनों पीठों में एक साथ सेवा करते हैं।

प्रेमयुक्त अन्तर्गत - भेदाभेद विचार

दशगुण 8

हरे शक्ति सर्वे निश्चिदस्वस्य स्वातः पारलानि

विवर्तना सदा श्रुतिमोक्षदिकृ कलमनम्

हरेर्भेदाभेदो श्रुतिविहित तत्त्वं सुविमलं

तत् प्रेमा निश्चिद्वर्तति सत्ता नवोत्पद्यते ।

चित् अजित समस्त ज्ञान कृष्णही शक्ति का परिणाम है। विवर्तनाद सात्वतही है यह कलिकाल का मल और तद्वत्कृष्ण ही है। अतः य भेदाभेद तत्त ही वेद सम्बन्ध विशुद्ध मन्त्र है। आबल्लोभेदाभेद तत्त ही है। यत्त तत्तक प्रति प्रेम जागृ होती है।

प्रश्न 1 'वैदान्त सूत्र' क्या है ?

उत्तर 1 श्रील व्यासमुनि ने तत्त्वज्ञान के क्षेत्र में कलिकाल के लिये एक वेद को 4 भागों में विभक्त किया। अथर्ववेद, रामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद ।

2) वेदों का समावेश कारण वा कर्मों के इनमें अनुभव है। अतः व्यासमुनि ने इन वेदों के समूह को व्यास का माधुर्य में एक भागों में विभक्त किया। इन व्यासपदों को वेदान्त कहते हैं।

3) 168 उपनिषदों में से 550 सूत्रों में संकलित करके व्यासदेव ने 'वैदान्त सूत्र' की रचना की। वैदान्त सूत्र को ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं।

प्रश्न 2 श्रीलक्ष्मी महाप्रभु ने क्यों यह मत स्वीकार किया ?

उत्तर 2 श्रीलक्ष्मी महाप्रभु ने मध्वनाथक भाष्य में स्वीकार करते हुए उक्ति मत का समावेश प्रमाण किया तथा 'आत्मनोभेदो वेद तत् प्रकृतं तत्त' अतः सभी रामप्रदायक आचार्यों ने अपने विचारों में भेद मत को स्वीकार कर लिया। वेदों की सम्भावना है प्रभु अस्तित्व के भेदाभेद मत न होकर वेदों का यह तत्त ही है। अतः पर तद्वत् विचारों की कोई सम्भावना नहीं है।

प्रश्न 3 भेदों के प्रकार का होता है -

उत्तर 3 भेदों के प्रकार हैं - (1) लक्षणापरिणामता (2) शक्तिपरिणामता

लक्षणापरिणामता - एक वस्तु जब किसी कारणवश दूसरी वस्तु में परिवर्तित हो जाती है तो इससे दूसरी वस्तु को पहली वस्तु का विकार या परिणाम कहते हैं।

शक्तिपरिणामता - एक वस्तु के अन्तः दहो दूसरी वस्तु का विकार है।



- (c) ब्रह्म-परिणामवाद → 'ब्रह्म' ही परिवर्तित होकर एक अज्ञान में जीव और दूसरे अज्ञानों का जन्म बनता है। एकतावादी मत अर्थात् निश्चयतावादी से पहले एक आदिम और एक अन्त ब्रह्म हो।
- * ब्रह्म-परिणामवाद सत्य नहीं हो सकता क्योंकि ब्रह्म निर्विकार है, अतः किसी भी प्रकार सम्भव नहीं है। और जब ब्रह्म का आत्मरूप अन्त कुछ भी नहीं है तो दूसरी वस्तु कहाँ से आ गई -

- (d) शक्ति-परिणामवाद → ब्रह्म का विकार सम्भव नहीं है अतः ब्रह्म का आत्मरूप अर्थात् निश्चयतावादी एक अज्ञान में जीव (जीवशास्त्र) और एक अज्ञान (जीवशास्त्र) का जन्म बनता है।

- * शक्ति-परिणामवाद जीव का कभी भी ब्रह्म आत्मरूप नहीं है अतः ब्रह्म ईश्वर में शक्ति में विकार सम्भव है।

शक्ति-परिणामवाद भी 2 प्रकार का है -

- 1) जीव में ब्रह्म बनना ब्रह्म ही परिवर्तित होकर फूल फल आदि बन। इसमें शक्ति का विकार होकर नई वस्तु बना रही है। परन्तु यह ईश्वर मान्य नहीं है क्योंकि इसमें शक्ति का आत्मरूप सम्भव ही नहीं है।
- 2) शक्ति में विकार होने पर भी शक्ति नवी ही रही और दूसरी वस्तु भी बन गई। शक्ति ईश्वर मान्य है। शक्ति-परिणामवाद के उदाहरण -
 - (a) मकड़ी जाला कुत्ता है अतः फिर इस जाला को सिंगल किया है। रीगा कनेफ मकड़ी का आकार हाथ या बदन नहीं है अतः अपरिवर्तित रहता है।
 - (b) रामानन्द मणि रंजन 40 मन्त्र शोभा देतो की पर भी इसका आकार अपरिवर्तित रहता था।
 - (c) किनारी में सदैव रंग बदलता होता है परन्तु वह स्वयं संपत्ति है।

Ques → ब्रह्म की इच्छा में शक्ति में विकार हुआ ब्रह्म की इच्छा होना भी तो विकार है?

Ans → जीव की इच्छा अन्त वस्तु का सम्बन्ध से होती है अर्थात् जीव की इच्छा करके लिये किसी अन्त वस्तु का होगा आवश्यक है जीव कभी भी आत्मरूप की इच्छा नहीं कर सकता जो उसने कभी भी देखी या सुनी न हो। जीव की इच्छा अन्त वस्तु पर निर्भर होने का कारण है इसको विकार कहते हैं।

ब्रह्मा की निरंकुश इच्छा ब्रह्मा का स्वयं अक्षण है ब्रह्मा की इच्छा केवल स्वयं वस्तु पर निर्भर नहीं होती इसलिए इसको लेकर नहीं कहा जा सकता।

Ques 3) मायावाद क्या है? यह किसने प्रचार का होता है?

Ans 3) पद्मपुराण के अनुसार -

मायावदमराच्छास्त्रं प्रवृद्धन्मलौहिमुत्तमै

भोवि विवर्तनं देव कर्तुं ब्रह्मविभूतिना। (अनुरक्त - 40:1)

भक्त देवना देवि पार्वतीजी कहे - मायावद अत्यन्त अस्वभाविक है यह वैदिक जालीक शायद भी पद्धत रूप से आधुनिक वर्गों में प्रवेश कर रहा है जो चरित्रवादी ब्रह्माण्ड भूमि पर प्रचार इसका प्रचार करेगा।

1) ब्रह्मा का जीव अम द्वारा जीवत्व

मायावाद विवर्त

ब्रह्मा का प्रतिवर्तन लेकर जीवत्व

स्वभाव ब्रह्मा के मूलक जीव और जो जीवों की ब्रह्मा अतिरिक्त पदों में

मायावाद के विचार - 1) बहुत परिवर्तन (मूलक अस्वभाव) जीव और अस्वभाव दोनों ब्रह्मा हैं, भी बना है माया के कारण जीव और ब्रह्म में भेद प्रतीत होता है,

मायामुक्त होते ही जीव ब्रह्मा बन जाता है।

2) अस्वभाव जब इस जगत् जगत् में आते हैं तो वह माया का आश्रय लेना पड़ता है। वे माया के स्वरूप ग्रहण करेंगे बिना जगत् में अवस्थित नहीं हो सकते। ब्रह्मा अस्वभाव में अवस्थित है परन्तु ईश्वर अस्वभावों में उनका माया के द्वारा युक्त आकार है। वे इस जगत् में आकर बड़े ईश्वर बनते हैं जो माया के द्वारा जगत् में स्वरूप स्वरूप गमन करते हैं।

ब्रह्मा को माया जगत् अतिशक्ति से स्वपूर्वक ग्रसित करती है तब वह जीव कहलाता है। जीव का अर्थ अस्वभाव होता है इसलिए जीव की इच्छा न होना पर भी वह जन्म मृत्यु, जरा, व्याधि के द्वारा ग्रसित है।

इस प्रकार माया के विना ब्रह्मा का आश्रय लेकर स्वैच्छा से माया के नाम, रूप, उपाधि आदि जगत् में है इसलिए वे कर्मक अस्वभाव नहीं हैं और स्वैच्छापूर्वक इन सबका

व्यक्ति अपने दाम बचा जा सकते हैं।

Ques मायावाद के 4 महावाक्य कौनसे हैं?

Ans (1) सर्वं खल्विदं ब्रह्म - समस्त जगत् ब्रह्म है (इ.स. 3/3/14)
नह्यमात्रेति च न - (इ.स. 3/3/14) - ब्रह्म किसी प्रकार का जगत् नहीं है।

(2) प्रज्ञानं ब्रह्म (इ.स. 3/3/14) - प्रज्ञान ही ब्रह्म है।

(3) तत्त्वमसि श्वेतकेतो (इ.स. 3/3/14) - तू ही श्वेतकेतु तू ब्रह्म तू ही।

(4) अहं ब्रह्माहम (इ.स. 3/3/14) - मैं ब्रह्म हूँ।

* * ये 4 महावाक्य हैं, जेना वेदां में कही नहीं गई है। प्रजापति (इ.स. 3/3/14) ही एकमात्र महावाक्य है। गीता में आत्मा को खरा कहा है - प्रजापति श्वेतकेतु
अर्थात् समस्त वेदां में मैं ही हूँ।
अतः ये 4 महावाक्य न होकर प्रादेशिक वाक्य हैं। प्रत्येक व्यक्ति के प्रत्येक
गोत्र का प्रत्येक 2 विनायक एक एक एक एक एक एक एक एक एक एक एक एक
अर्थात् अर्थ ही जाना सकता है। प्रादेशिक वाक्यों को लेकर खींचतानी करने
का कुशल का ही प्रकाश होना। वेदों में जो कुछ कहा है वह सत्य है किन्तु
हमारी बुद्धि उनका समस्त सार समझने में असमर्थ है।

Ques भक्तिमय महादेव परम तेजस्वी हैं फिर उन्होंने मायावाद (अज्ञान भ्रम) का
प्रचार क्यों किया?

Ans परमेश्वर ने आत्मार्थ का साक्षात् लेकर, सकल भक्तों को अपने दुःख
उद्देश्यों को पूर्ण करना शुरू कर दिया। तब भक्तों का मानना था कि
कि अगर भक्तिपथ को अच्छे तरह भक्तों को कल दे रहे हैं। इसलिये
आत्मार्थ को असुरों से बचना चाहिए तब भक्तों का महादेव को
बुलाकर कहा - हे शिव, तू मेरे दुःखों को नाश करने के लिये मेरे
शरीर का प्रचार कर जो मुझे असुरों से गोपनीय रखे। आत्मीय
प्रवृत्ति के लोग भक्तिपथ त्यागकर इस मायावाद शास्त्र का आश्रय ग्रहण

कहेंगे तब। अन्ततः बिना किसी बाधा के शुरू अन्तर्ध्याना का अभ्यास करेंगे।"
 गुरु वज्रव महादेवने दुःखपूर्वक भगवान के आशीर्वाद पर उनका यह भ्रमोन्मत्त बूझ
 किता श्रम शिखी का क्या दोष है ?
 इसी शुरु वज्रव भागवत के प्रचारक शुक के चतवार शुकशार्प का दोष नहीं
 करते। भागवत में भगवान ने कहा है -

तस्मादयं तवा शिखी ग्राह्ययागं तदग्राह्यं

द्वापरादी युगे भूत्वा कलया मानुषादिषु ।

स्वायमेव कल्पान्तकाले जगत्पुनरुत्थाने कुरु

भावात् गोप्यं येन नाम साधुर्विदितोत्तरा । (उत्तराखण्ड, 42/09/10)

ह शिखी। स्वयं भगवान होकर भी मैंने जिस प्रकार असुरों का मोहित करना किया
 द्वारा देवी कलयाओं की आराधना की है, उसे प्रकार तुम्हारा भी आराधना करके में
 तर प्राप्त करना। तूम्हें कलयाओं के चरणों में लीन होकर स्वयं कलया
 मत का प्रचारकर असुरों को मोहित करने का दोष है।

...

वराह पुराण में भगवान ने शिखी से कहा -

अथ गुरुः शिखीयाम् तं जगत्पुनरुत्थाने

तस्मात् रुद्र भगवानो ग्राह्ययागं कुरु ।

अत्रायाम् तत्त्वार्थं दक्षपुत्र महाभिल

पकाक्ष कुरु नाममात्रप्रकाशनं मां कुरु ।

मैं शिखी गुरु को आशीर्वाद करता हूँ। मैं लोगों को मोहित करूँगा। हे रुद्र! तुम्हारी
 एक शिखी मोह शिखी का रचना करो। अन्तर्ध्याना को तब और तब का अन्तर्ध्याना रूप
 प्रकाशित करो। अपने स्वरूप का प्रकाश करो और मेरे भगवान् स्वरूप का
 अन्तर्ध्याना करो।

Ques. 'आयुर्वेद' और 'अष्टांग' क्या है ?

Ans. कृष्ण के जन्म के बाद जीवन शक्ति और जीवन शक्ति से अपना जीवन का एक साथ में
 अन्तर्ध्याना है। यह अन्तर्ध्याना तब अन्तर्ध्याना पर है। कारण 'आयुर्वेद' कहलाता
 है।

ईश्वर और जीव में द्वैद - स्वभाव और स्वरा की दृष्टि से।

- 1) ईश्वर सर्वशक्तिमान है अतः इसे सगुण गुण पूर्ण माना है। जीव अणु चित है अतः उसमें समस्त गुण अणु मात्रा में हैं।
- 2) ईश्वर चित शक्ति, जीव शक्ति और माया शक्तिके अधीश्वर हैं शक्ति उनके दासी है जबकि जीव शक्तिके वश में है।
- 3) ईश्वर विग्रह है, जीव सुद्र है।
- 4) ईश्वर पूर्ण स्वतन्त्र है जीव अणुवत् पतन स्वतन्त्र है। उदाहरण के प्रकार उसी से बँधी गयी स्त्री की भाँति है तक है स्वतन्त्र नहीं है।
- 5) ईश्वर सेव्य है, जीव कृताका दास है।

ईश्वर और जीव में अन्धेद - चित तत्त्व की दृष्टि से।

- 1) दोनों ही ज्ञान स्वस्व, ज्ञाना ज्ञेय, ईश्वर और इच्छाग्रह है।
- 2) दोनों चिन्मय हैं।

कृताका के साथ जीव का चित दर्शकी दृष्टि से अन्धेद है अतः स्वभाव, दोनों में भिन्न भेद है। उदाहरण के प्रकार दुकान में कंगन लगाया। गुलाबी दुकान में लाली के गुलाबी दुकान और कंगन दोनों समान है परन्तु स्वस्व (आकर्षण) की दृष्टि से दोनों में भेद है। कंगन की रंग में पहना है परन्तु गंगकों नहीं।

इसी प्रकार जीव का कृताका के साथ भिन्न भेद और भिन्न अन्धेद दोनों है परन्तु जहाँ भिन्न भेद और अन्धेद दोनों होते हैं वहाँ भिन्न भेद की प्रतीति ही प्रबल होती है।

* * केवल भेद या केवल अन्धेद मानने में सेवा सम्भव नहीं है।

1) यदि केवल भेद माना जाये तो जीव और ज्ञातान दोनों स्वतन्त्र हो गये। स्वतन्त्र रहता होने में न कोई भेद रहा और न कोई सेवा अतः कोन किसकी सेवा करेगा।

2) केवल अन्धेद माना जाये तो चिर्क रुक हो तन्तु रह गई जबकि सेवा के लिये 2 लोग होने चाहिये रुक जाता करने वाला (सेवक) और दूसरा जिसकी सेवा की जाये (सेव्य)।

अतिये 'अचिन्त्य भेदाभेद तत्त्व' स्वीकार किये बिना सेवा सम्भव नहीं

है। इसकी स्वीकार करने पर ही जेव और आनन्द में 'चेद-प्रतीति' नित्य सिद्ध होती है और चेद गतान्तक बिना जीवों का परम प्रयोजन 'प्रीति' सिद्ध नहीं हो सकता।

Ques प्रीति है जीवों का परम प्रयोजन है इसका क्या प्रमाण है -

Ans प्रत्येक जीव प्रीति (आनन्द) के लिये उत्पन्न करता है क्योंकि निवृत्त भोगों में आनन्द अनुभव करता है। सुखद्वारा लभित मोक्ष का आनन्द मानते हैं और अन्न द्वारा जीवनानन्द प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार सभी लोग प्रीति के लिये ही प्रयत्नशील हैं। परन्तु कभी ज्ञानी का आनन्द नित्य नहीं होता क्योंकि -

- 1) कभी कभी स्वर्गादि प्राप्त होते हैं जो आनन्द है अतः आनन्द भी अनित्य हो
- 2) ज्ञानी ब्रह्मनिर्वाणों आनन्द की कामना करता है जो कि अकारण है क्योंकि भक्ति होने पर "मैं" का आस्तित्व नहीं रहता वह ब्रह्म बन जाता है तो मरना अनुभव कौन करेगा? 'मैं' के मरने में 'मैं' समाप्त हो गया और जब मरने नहीं रहा तो मरना फिरसे अनुभव करेगा? (क्योंकि आनन्द के लिये किसी दूसरे वस्तु का अवलम्बकता होती है)

* आनन्द में ही सत्मा का प्रयोजन सिद्ध होता होता है। आत्मिक परम आनन्द प्रीति है और महा प्रीति नित्य है क्योंकि ब्रह्म जीव नित्य है कृपण भी नित्य है अतः दोनों के बीच प्रीति भी नित्य है। अतः आनन्द का भेदाभाद अतः स्वीकार करने से ही प्रेम की नित्यता सिद्ध होती है।

दशमूला 9

भुक्ति कृत्वा स्वर्गं नमरागनिपूजयति विराट्

तथा दाम्यं शख्यं परिचरतमव्यात्मददना

नताप्राप्त्यं नह तन्मग्नशक्तेरनुदिन

भजनं श्रद्धापूर्वकं सूतिमलमते ते रा लभते ।

भक्तता, कीर्तन, समर्पण, लभन, पदसेवा, अर्पण, दाम्य, शख्य आत्मनिवेदन इस नवदा ^{वर्ष} भक्तिकाली लोग श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन अनुशीलन करते हैं, वे विमल कृष्ण प्रेम प्राप्त करते हैं।

Ques: समर्पण कितने प्रकार का होता है ?

Ans:

1. समर्पण (दारु, मूल्य या अनुभूति का बलिदान करके भक्तिकाम)

2. दाम्य (लक्ष्मी से चित्त का खींचकर, जनम करके विशिष्ट विशिष्ट कारणों का)

3. शख्य (का आदि का विशेष कर के चिन्तन करना)

4. भुक्तानुभूति (तेल दारुन निरन्तर अतिरिक्त दान)

5. समाधि (द्येय मात्र की स्फूर्ति)

Ques: प्रयोजन प्राप्ति का क्या अर्थ है ?

Ans:

ज्ञान और कर्मों द्वारा प्राप्त शक्ति ही जीताका यही प्रयोजन है और वही प्रयोजन सिद्धि का अर्थ है । जगत् अन्तर्धाम जो साधन भक्ति और सिद्ध अन्तर्धाम ही प्रेम शक्ति कहते हैं।

अन्तर्धाम प्राप्त हुआ है साधकसाधनाप्रकार

अनुभूति कृष्णभूति शक्तिस्वरूप ।

Ques:

यदि भक्ति इतनी श्रेष्ठ है तो राक्षसों और शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रयत्न क्यों नहीं करते ?

Ans:

मनुष्य बड़े लक्ष और जीवन्त है वह दिव्य और प्राणी शक्ति तक नहीं पहुँच सकता पूर्ण शक्ति मुकृतिक प्रभाव है जो कि स्वयं ही बोड़ी काँच है जहाँ है तो ही शक्ति बलाको समझ सकते हैं।

Ques 1 तर्कश्रम द्वारा पालन करने वाले सभी लोग शक्ति को नहीं करते ? क्या वर्त्ताधर्म धर्म वालों को अपने कर्तव्य और शक्ति भरा देव का पालन करना पड़ता है ?

Ans 1 अनेक जन्मों की लुप्तप्राय स्वरूप जिन जन्मों की शक्ति में बढ़ा होती है अर्थात् वर्त्ताधर्म धर्म शक्ति नहीं होती । ऐसे जन्मों का शक्ति में साधक है । शक्ति भरा देव पालन करने में कर्तव्य पालन अपने आप हो जाता है यदि शक्तियों के बिना कोई पालन हो जाता तो प्रायश्चित्त करने की कोई आवश्यकता नहीं होती, शक्ति करनेवाले शक्ति प्रायश्चित्त हो जाता है ।

* गीता (18/66) के अनुसार जब शक्तिक शक्ति पर अधिकार हो जाता है तो ज्ञान और कर्म शक्तियों की विधियों का पालन करने की आवश्यकता नहीं होती । शक्ति ही सर्वविधि हो जाती है ।

Ques 1 समस्त शास्त्रों को पढ़कर कविशर्मा के अनुसार के विवेक-निर्देश न वैदिक शास्त्रों का निर्देश करना असम्भव है । शक्ति में शक्ति में विवेक निर्देश करना निर्देश है ?

Ans 1 शक्ति में शक्ति में विवेक निर्देश नहीं हो सकता ।
गते विवेकनिर्देशा स्वरूपेणैव तद्वत् । (पद्मपुराण - उत्तरखण्ड 4-103)
शक्तानां विवेकानां शक्ति समस्त शक्ति ही गूना विवेक है । शक्ति वर्त्ताधर्म धर्म के नियम इसी विवेक के अन्तर्गत है ।
शक्तानां कभी भी शक्ति ही गूना विवेक है । अनेक पाप और उनके प्रायश्चित्त इसी विवेक के अन्तर्गत है ।

Ques 1 नाम और मन्त्र में क्या शक्ति है ?

Ans 1 शक्ति नाम ही मन्त्र के प्राण है । 'नाम' के प्रायश्चित्त में 'उ', 'ऐ', 'ही', 'कनी', 'आदि' बीज लगाकर तथा मन्त्र में समर्पण सूचक 'स्ताहा' लगाकर शक्तियों के मन्त्रों की रचना करके एक विशेष शक्ति का स्वरूप न किता है । इस मन्त्र के द्वारा शक्तानां जो एक सम्मन्त्र स्वरूप किता जाता है ।
शक्ति नाम ही निर्देश न किता है मन्त्र बड़ा जीव की नाम के प्रति बढ़ा नहीं होती अतः शक्ति मन्त्रों में शक्तियों की रचना की और उनके लिये विवेक नियम बनाये । 'नाम' करने के लिये कई विवेक-निर्देश नहीं होता अतः बड़ा जीव की नाम के प्रति बढ़ा नहीं रहती परन्तु मन्त्र के नाम में शक्ति, देश, काल आदि का विचार होता है उन बड़ा जीवों की चित्त शक्ति के लिये ही मन्त्रों की रचना की गई ।

* शक्ति की अन्तर्गत में मन्त्र की आवश्यकता नहीं रहती अतः केवल नाम पाप

ही किया जाता है।

- * गुरुदेव शिष्यों को दीक्षा देने के समय चार दोषों - सिद्ध, शास्त्र, सुनिह, अरि का शोधन करने के बाद ही दीक्षा प्रदान करते हैं, परन्तु अतदादश अक्षर का मन्त्रगण (कृष्णमन्त्र) में इन दोषों का कोई अपेक्षा नहीं रहती।

श्रीलोक्य जगमोहन स्वामी महादेवने कहा है -

अतदादशक्षर मन्त्रादिकृत्वा श्रीगणितेनीकम्
न चात्र शास्त्रा दीक्षा लक्ष्यतादि - विचारता ।

बृहद्गौतमीय तन्त्र के अनुसार -

सिद्ध शास्त्र सुनिहृष्टि रूपं नात्र विचारता
शतेषां सिद्ध मन्त्राणां यतो ब्रह्माक्षरो मनु ।

अर्थात् कृष्ण मन्त्र का प्रत्येक अक्षर ही ब्रह्मा है अतः इस मन्त्रों 4-
दोषों का विचार नहीं है।

- * श्रीलोक्य चारनाम्न के अनुसार - नाम ही अक्षरमन्त्रों का स्वर है।

कृष्णमन्त्र है तो स्वर मोचन

कृष्णमन्त्र है तो कृष्ण चरण ।

नाम विना कलिकाली नाहि आर दामि

शक्तिमन्त्रसार नाम . कई शास्त्रनाम । (चै. ज. आ. 17/72 74)

प्रमेय के अन्तर्गत अधिष्टेय वस्तु का विचार वैदिक साधन भक्ति

Ques 1 | पंचांग भक्ति के कौन से अङ्ग हैं ?

Ans 1 (1) भ्रष्टापूर्वक प्रीतिग्रह की सेवा (2) रक्तिक भक्तों के साथ प्रीमद्वारा वक्त का आवाहन करना (3) श्रेष्ठ साधु सन्तों का सेवा (4) प्रीतिग्रह सन्तोषन
- (5) मधुरा आदि अंगदामों में वसना

Ques 2 साधु मार्ग का अनुसरण किसे कहते हैं ?

Ans 2 जिस किसी उपायसे कृतांगे मन लगाया जाये, उसे साधन भक्ति भी कह सकते हैं परन्तु पूर्ण महाजन जिस मार्ग का अनुसरण करते गये हैं उसी मार्ग का अनुसरण करना कर्तव्य है। इसका कारण यह है कि वह मार्ग सर्वदा दुःखरहित, प्रमदरहित, और समस्त कल्याणका हेतु होता है।

स गृह्य प्रेयसा हेतु पन्थाः सन्नापतर्जित

अनताप्रपन्नं पूर्णं येन सन्त प्रतर्जिते । (स्कन्द पुराण)

पूर्व महाजनोंने जिस मार्ग को अत्यन्त गुलबन भर्त्ता प्रमदरहित जानकर ग्रहण किया है वही पक्ष कल्याण प्राप्त के लिये सन्नापतर्जित है अतः एकमात्र वही पक्ष ग्रहण करने योग्य है।

* कोई भी पक्ष किसी एक व्यक्ति द्वारा सुन्दर ढंग से निर्धारित नहीं होता पूर्व महाजनोंने एकके बाद दूसरे को क्रमशः इस भक्ति पक्ष को होता होता समस्त विद्वान्-बाधाओं को दूरकर उसे सत्य और निर्दोष बनाया है। इसलिये इस मार्ग का अनुसरण करना ही कर्तव्य है। पूर्व महाजनों द्वारा दिये पक्ष को न्यायकर प्रीतिग्रह की यदि रक्षात्मकी भक्ति भी की जाये तो उससे ही कल्याण नहीं हो सकता, यही उपाय है।

Ques 3 हरिके प्रति अनन्या भक्ति उपाय का कारण कैसे हो सकती है ?

Ans 3 भक्ति स्मृति पुनर्गादि पञ्चरात्र विधि बिना
रौक्मन्तिकी हरेभक्ति पावयेत कल्पते । (ब्रह्मयामल)

पूर्व महाजन पक्ष को होकर किसी दूसरे पक्ष को स्वीकार करनेसे रक्षात्मक भाव प्राप्त नहीं होता। तद्विभाग के सहायक साधकों को ध्यान प्रसाद, नारद, व्यास और शुक आदि महाजनों द्वारा सिद्ध भक्तभक्त

अवलम्बन करना आवश्यक है। रागमार्ग में प्रति प्रति प्रति की विधियों की अपेक्षा नहीं रहती, इसमें केवल वलम्बीयों के अनुगमन की अपेक्षा रहती है।

- * दत्तात्रेय, बृह्म आदि ने शूद्र धर्मिकों को समझकर उनके धर्मधर्म को ग्रहण कर मायावाद और नार्तिक पन्थों का प्रचार किया और इसमें हरिधर्म का आगे बढ़ाया परन्तु उनके द्वारा प्रवर्तित पदा हरिधर्म नहीं बल्कि अपात नश्येप है।

Ques 1 जीवन निर्वाह उपयोगी विषय ग्रहण करने का क्या मतलब है ?

Ans 1 यावत् रयात् स्तानिर्वाह स्वीकृत्य तावत्पर्याप्तम्

आवश्यक न्यूनताओं का खतरे परमाश्रित (नारदीय पुराण)

जिसे भाषा में धन आदि ग्रहण करने से आपकी आत्म और जीवन निर्वाह हो, जी भाषा में ग्रहण करना चाहिए क्योंकि आवश्यकता से अधिक या अल्प ग्रहण करने से परमार्थ से भ्रष्ट होना पड़ता है।

- * आवश्यकता से अधिक ग्रहण करने से आत्म और कम ग्रहण करने से अभाव के कारण अज्जन में लारा आती है अब विरोध हो तो तब जीवन निर्वाह सम्बन्धी समस्याओं को ग्रहण कर अज्जन करना चाहिए।

Ques 1 सद्गुण किसे कहते हैं ?

Ans 1 सद्गुण शब्द से आराधित का बोध होता है। दूसरे लोगों से निकलता अथवा वास्तविक को सद्गुण नहीं कहते जब या निकलता अथवा वास्तविक में आराधित होती है उसे सद्गुण कहते हैं। जब तक आत्म अद्वित न हो तब तक आत्म विरोधी सद्गुण परिहाण करना आवश्यक है। कृष्ण विमुख लोगों के सद्गुण से अक्षितता भी मुख जाती है।

Ques 1 कृष्ण विमुख कौन हैं ?

Ans 1 कृष्णधर्म के अनेक लोगों में आसक्त विषयों की सद्गुण में आसक्त, गायत्री, नार्तिक - ये चार प्रकार के लोग कृष्ण विमुख हैं।

Ques 1 'अहंता' और 'ममता' क्या हैं ?

Ans 1 अहंता के अर्थ में अहंता की वेश कहते हैं। इस जीवन के प्रति जो "मैं" की बुद्धि होती है उसे अहंता कहते हैं। शरीर के प्रति जो "मेरा" की बुद्धि होती है उसको देह निष्ठ 'ममता' कहते हैं।



* 'मैं' और 'मेरा' उस बुद्धि को होड़कर 'मैं' कृष्ण का दास हूँ और यह शरीर कृष्णकी सेवाका उपयोगी रक्त यन्त्र है - इस बुद्धिसे शरीर का निर्वाह करना ही आत्मनिवेदन है।

* भक्तिके अंगोंका मुख्य फल कृष्ण प्रेम है परन्तु कभी-2 शास्त्रोंमें जो इनके अवांतर फलों का वर्णन देखा जाता है, वह कृष्ण-बहिर्मुख लोगोंमें भजनके प्रति रुचि उत्पन्न करने के लिये है। ज्ञान और वैराग्य भक्ति के अंग नहीं हैं क्योंकि ये चित्तको कठोर बना देते हैं जबकि भक्ति सुकोमल स्वभाव की होती है। भक्तिके द्वारा जो ज्ञान और वैराग्य स्वतः उत्पन्न होते हैं, वे ही स्वीकार्य हैं।

- ① चण्डी की एक बार, सूर्य की ३, गणेश की ३, केशव की ४ एवं महेश की आधी परिक्रमा करनी चाहिए। (नृसिंह पुराण)
- ② ४ बार विष्णु मन्दिर प्रदक्षिणा के द्वारा विश्व-ब्रह्माण्ड की प्रदक्षिणा हो जाती है और इसका फल तीर्थगमन से ज़ेबठ है। (ब्रह्मपुराण - चतुर्मास माहात्म्य) ४ प्रदक्षिणा करने वाला हंसों से युक्त स्थल पर बैकुण्ठ जाता है।
- ③ ३ बार हरि मन्दिर प्रदक्षिणा करने वाला समस्त पापों से मुक्त होकर देवेंद्र पद प्राप्त कर लेता है। (बृहन्नारदीय पुराण - यम-भागीरथ संवाद)
- ④ एक हाथ से विष्णु-प्रणाम, केवल एक बार हरि मन्दिर प्रदक्षिणा, निषिद्धकाल में विग्रह दर्शन (श्रृंगार, भोग आदि के समय, श्रृंगार रहित, वंशी रहित) नहीं करना चाहिए इससे प्राक्तन सृष्टि नष्ट हो जाती है। विग्रह के सामने गोल-१ नहीं घूमना चाहिए इससे भगवान को पीठ दिखाना होता है। (विष्णु-स्मृति)

अष्ट सिद्धि → ① अणिमा → अणु सूक्ष्म रूप धारण करना

② महिमा → विराट रूप धारण करना

③ लघिमा → हवा, रुई के समान शरीर हल्का करना, हवा में १ मिनट में हजारों मील जा सकता है। आकाश में उड़ सकता है।

④ गरिमा → पर्वत के समान भारी होना

⑤ प्राप्ति → पृथ्वी पर रहकर सूर्य, चन्द्र को छू सकता है। भविष्य बताना, दिव्य दृष्टि, कहीं की भी बात सुन लेना, मानसिक संदेश देना, मन की बात जानना, पशु-पक्षी की भाषा समझना, कोई भी भाषा समझना, किसी भी रोग का इलाज

⑥ प्रक्ताम्य → जल में रहना (शोभा री ऋषि), अदृश्य होना, दूसरे के शरीर में प्रवेश करना (शंकराचार्य ने राजा अमरुक के शरीर में प्रवेश किया), धुवा बने रहना (राजा ययाति)

⑦ वक्षित्व → किसी को भी वश में कर लेना

⑧ ईशित्व → मरे को जीवित कर देना, ब्रह्माण्ड का देवता बनना (विश्वामित्र ने त्रिशंकु के लिये नये स्वर्ग का निर्माण किया)

नवनिधि (कुबेर के पास) → महापद्म (हीरे-मोती की झील), पद्म, मकर (काले रंग की चमकीली धातु), शंख, नीलम, कच्छप, कुंद, मुकुंद, खर्व।

* ७ मोक्षदायिनी पुरी → अयोध्या, मथुरा, गया, काशी, लाञ्छी, अलानिका, हारका।

सम्प्रदाय	आचार्य	उपास्य विग्रह	वेदान्त शास्त्र	मत
श्री	रामानुजाचार्य	लक्ष्मी-नारायण	श्री भाष्य	विशिष्ट अद्वैतवाद
ब्रह्म	मदवाचार्य	गोपाल	अणु भाष्य, अणु व्याख्यान	द्वैतवाद
रुद्र	विष्णुस्वामी	लक्ष्मी नृसिंह	सर्वज्ञ सूक्त	शुद्ध अद्वैतवाद
चतुःसम (सनक)	निम्बादित्य	रुक्मिणी-द्वारिकाधीश	पारिजात सौवम	द्वैत-अद्वैतवाद

सृष्टि तत्त्व (Creation of Universe)

When mahavishnu wants to create the universe, then he glances at maya. Maya is inactive but glance (sight) of vishnu is transcendental; so maya gets active and is stimulated by the glance. Then there is disturbance in the 3 modes of prakriti (mode of passion, goodness & ignorance) as a result, first element is created called mahat tattva.

① महत् तत्त्व (Mahat Tattva)

↓ ② अहंकार (false ego)

↓
③ सात्विक अहंकार
(Sattvika or vaikarika ego)

↓
④ राजसिक अहंकार
(Rajasika or Taijasa ego)

↓
⑤ तामसिक अहंकार
(Tamasika ego)

↓
मन और इंद्रियों के देवता
(Mind and demigods which control our senses)

↓
5 महाभूत (Gross elements)

आकाश (space), वायु (air), जल (water), अग्नि (fire), पृथ्वी (earth)

↓
5 तन्मात्रा

शब्द (sound), स्पर्श (touch), रूप (form), रस (taste), गंध (smell)

↓
5 ज्ञानेन्द्रियाँ (Knowledge senses)

चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा
↓
eyes ear nose tongue skin

↓
5 कर्मेन्द्रियाँ (Working senses)

वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ
↓
speech hands feet Anus genital

⑥ अज्ञान (Ignorance)

These 6 elements were created by maya so it is called 'Mayik creation'

Elements 7 to 10 were created by Brahma, therefore it is called 'Vairaj creation'. 'Vairaj' is another name of 'Brahma'.

- ⑦ स्थावर (Sthavar or non-moving objects) → वृक्ष (trees), पर्वत (Mountain)
- ⑧ तिर्यक (Tiryaka) → पशु (animals), पक्षी (Birds), कीट-पतंग (Insects)
- ⑨ मनुष्य (Human Being)
- ⑩ देवता (Demi God)
- उभय स्रष्टा (Ubhaya Sristi) → नारद (Narada), चतुर्सेन (Catuhseen)

'आत्मा' शब्द के ७ अर्थ → ब्रह्मा, देह, मन, यत्न, धृति, बुद्धि, स्वभाव
इन ७ वस्तुओं में जो रमण करता है, उसे 'आत्माराम' कहते हैं।

'मुनि' शब्द के ७ अर्थ → मननशील, मौनी, तपस्वी, व्रती, यति, ऋषि एवं मुनि

शुकदेव गोस्वामी की माता का नाम - कीटिका